सत्यमेव जयते

शनिवार,
१ मई, १९५४

संसदीय वाद विवाद

1st

लोक सभा

छठा सत्र

शासकीय वृत्तान्त

(हिन्दी संस्करण)

Preservation Unit
13·3·92
Fumigated
On ...
Parliament Library

भाग २—प्रश्न और उत्तर से पृथक् कार्यवाही

विषय-सूची

अंक ४--१७ अप्रल से ४ मई, १९५४

पृष्ठ भाग

शनिवार, १७ अप्रैल, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र—

तटस्थ राष्ट्र प्रत्यावर्तन आयोग, कोरिया के प्रतिवेदन और चुने हुए दस्तावेज ३४३९

अत्यावश्यक लोक महत्व के विषय पर ध्यान आकर्षित करना—

दक्षिण पूर्व एशिया और पश्चिमी प्रशान्त महा सागर के लिये सामूहिक रक्षा की व्यवस्था ३४३९–३४४३

सदन का कार्यक्रम ३४४३–३४४५

अनुदानों की मांगें—

मांग संख्या २६–वित्त मंत्रालय ३४४६–३४८७
मांग संख्या २७–सीमा शुल्क ३४४६–३४८७
मांग संख्या २८–संघ उत्पादन शुल्क ३४४६–३४८७
मांग संख्या २९–निगम कर तथा संपत्ति शुल्क समेत आय पर कर ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३०–अफीम ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३१–स्टाम्प्स ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३२–अभिकरण विषयों के प्रशासन तथा कोषों के प्रबन्ध के लिये अन्य सरकारों, विभागों आदि का भुगतान ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३३–लेखा-परीक्षा ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३४–मुद्रा ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३५–टकसाल ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३६–प्रादेशिक तथा राजनैतिक पेंशनें ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३७–वृद्धावकाश भत्ता तथा निवृत्ति वेतन ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३८–वित्त मंत्रालय के अधीन विविध विभाग तथा व्यय ३४४६–३४८७
मांग संख्या ३९–राज्यों को सहायक अनुदान ३४४६–३४८७
मांग संख्या ४०–संघ तथा राज्य सरकारों के बीच विविध समायोजन ३४४६–३४८७
मांग संख्या ४१–असाधारण भुगतान ३४४६–३४८७
मांग संख्या ४२–विभाजन पूर्व के भुगतान ३४४६–३४८७
मांग संख्या ११५–भारतीय सुरक्षा मुद्रणालय पर पूंजीव्यय ३४४६–३४८७

	पृष्ठ भाग
मांग संख्या ११६–मुद्रा पर पूंजी व्यय	३४४६–३
मांग संख्या ११७–टकसाल पर पूंजी व्यय	३४४६–३४
मांग संख्या ११८–निवृत्ति वेतनों का परिगत मूल्य	३४४६–३४८७
मांग संख्या ११९–छंटनी किये गये व्यक्तियों को भुगतान	३४४६–३४८७
मांग संख्या १२०–वित्त मंत्रालय का अन्य पूंजी व्यय	३४४६–३४८७
मांग संख्या १२१–केन्द्रीय सरकार द्वारा देय ऋण तथा अग्रिम धन	३४४६–३४८७
मांग संख्या ७०–विधि मंत्रालय	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७१–चाय-व्यवस्था	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७२–प्राकृतिक संसाधन तथा वैज्ञानिक गवेषणा मंत्रालय	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७३–भारतीय भूपरिमाप	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७४–वानस्पतिक सर्वेक्षण	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७५–प्राणकीय परिमाप	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७६–भूतत्वीय परिमाप	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७७–खानें	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७८–वैज्ञानिक गवेषणा	३४८७–३४८८
मांग संख्या ७९–प्राकृतिक संसाधन तथा वैज्ञानिक गवेषणा मंत्रालय के अधीन विविध विभाग तथा व्यय	३४८७–३४८८
मांग संख्या ८०–संसद् कार्य विभाग	३४८७–३४८८
मांग संख्या १०७–संसद्	३४८७–३४८८
मांग संख्या १०८–संसद् सचिवालय के अधीन विविध व्यय	३४८७–३४८८
मांग संख्या १०९–उपराष्ट्रपति का सचिवालय	३४८७–३४८८
मांग संख्या १३१–प्राकृतिक संसाधन तथा वैज्ञानिक गवेषणा मंत्रालय का अन्य पूंजी व्यय	३४८७–३४८८
विनियोग (संख्या २) विधेयक—पारित	३४८८–३४८९
गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों सम्बन्धी समिति की छठी रिपोर्ट स्वीकृत	३४८९–३४९०
केन्द्र में प्रशासन-तन्त्र तथा कार्यप्रणाली के विषय म संकल्प—असमाप्त	३४९०–३५३८

सोमवार, १९ अप्रैल, १९५४

अविलम्बनीय लोक महत्व के विषय की ओर ध्यान दिलाना—शकूर बस्ती आर्डिनेन्स डिपो में गड़बड़	३५३९–३५४२
सदन की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति सम्बन्धी समिति—द्वितीय प्रतिवेदन उपस्थापित	३५४२–३५४३
वित्त विधेयक—विचार करने का प्रस्ताव—असमाप्त	३५४३–३६१६

पृष्ठ भाग

मंगलवार, २० अप्रैल, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र——

विभिन्न आश्वासनों, प्रतिज्ञाओं आदि पर सरकार द्वारा की गई कार्यवाही संबंधी विवरण ३६१७–३६१८
संसद् सदस्यों के वेतन तथा भत्ते के भुगतान के सम्बन्ध में संयुक्त समिति——द्वितीय प्रतिवेदन का उपस्थापन ३६१७
वित्त विधेयक——असमाप्त ३६१८–३६८८

बुधवार, २१ अप्रैल, १९५४

राज्य परिषद् से सन्देश——

शिलांग (राइफल रेंज तथा उमलांग) छावनियां विधि आत्मसात्करण विधेयक——परिषद् द्वारा पारित रूप में सदन पटल पर रखा गया ३६८९
हिमाचल प्रदेश तथा बिलासपुर (नया राज्य) विधेयक——परिषद् द्वारा पारित रूप में सदन पटल पर रखा गया ३६८९

सदन पटल पर रखे गये पत्र——

भारत भण्डार विभाग द्वारा अस्वीकृत टेण्डरों सम्बन्धी वक्तव्य ३६९०
"भारत में फ्रेंच बस्तियां" नामक दस्तावेज ३६९०
वित्त विधेयक——विचार प्रस्ताव——स्वीकृत ३६९०–३७६२

बृहस्पतिवार, २२ अप्रैल, १९५४

याचिका समिति——पहली रिपोर्ट का उपस्थापन ३७६३
सदन की बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति सम्बन्धी समिति की सिफारिशें ३७६३–३७६४
वित्त विधेयक——संशोधित रूप में पारित ३७६४–३८६८

शुक्रवार, २३ अप्रैल, १९५४

सदन का कार्य ३८६९–३८७०
सरकारी विधेयकों का क्रम ३८७०–३८७२
न्यूनतम मजूरी (संशोधन) विधेयक——संशोधित रूप में पारित ३८७२–३८८४
स्वेच्छापूर्वक वेतन परित्याग (करारोपण से विमुक्ति) संशोधन विधेयक——पारित ३८८४–३९०४
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय (संशोधन) विधेयक——पुरःस्थापित ३९०४
अनैतिक पण्य तथा वेश्यागृह दमन विधेयक——वादविवाद स्थगित ३९०५–३९२०
खाद्य पदार्थ अपमिश्रण दंड विधेयक——वादविवाद स्थगित ३९२०–३९३०
महिला तथा बाल संस्था अनुज्ञापन विधेयक——विचार करने का प्रस्ताव——असमाप्त ३९३०–३९४६

शनिवार, २४ अप्रैल, १९५४

राज्य परिषद से संदेश ३९४७-३९४८, ४०४२
हिन्दचीन के विषय में वक्तव्य ३९४८-३९५६
पुस्तक प्रदान (सार्वजनिक पुस्तकालय) विधेयक—संशोधित रूप में पारित ३९५६-३९७३
उच्च न्यायालय के न्यायाधीश (सेवा की शर्तें) विधेयक—संशोधित रूप में पारित ३९७३-४०३९
लुशाई पहाडी जिला (नाम परिवर्तन) विधेयक—पारित ४०४०-४०४२
विलीन क्षेत्र (विधि) विधेयक— विचार करने का प्रस्ताव—असमाप्त ४०४२-४०४४

सोमवार, २६ अप्रैल, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र— ४०४५-४०४६
  परिवहन मंत्रालय अधिसूचना संख्या ९–पी० आई० (२५०) ५३, दिनांक १५–२–५४
  कलकत्ता बन्दरगाह आयोग के लिये निर्वाचित आयुक्तों के स्थानों का पुनर्वितरण दिखाने वाला विवरण
  परिवहन मंत्रालय अधिसूचना संख्या १३–पी० आई० (१२४) ५३, दिनांक १५–२–५४
  मद्रास बन्दरगाह न्यास के लिये निर्वाचित न्यासधारियों के स्थानों का पुनर्वर्गीकरण दिखाने वाला विवरण ४०४६-४०५२
विलीन क्षेत्र (विधि) विधेयक—पारित ४०५४-४०६९
जनता के लिये तात्कालिक महत्वपूर्ण-विषय की ओर ध्यान आकर्षित करना —
  माओ-माओ आन्दोलन में भाग लेने वाले व्यक्तियों के सन्देह में सामूहिक रूप से नैरोबी स्थित भारतीय आयुक्त के कार्यालय की तलाशी ४०५२-४०५४
औषधि तथा जादुई चिकित्सा (आपत्तिजनक विज्ञापन) विधेयक— पारित ४०६९-४१०५
संघीय प्रयोजनों के लिये भूमि का राज्य द्वारा अर्जन (मान्यीकरण) विधेयक—पारित ४१०५-४१०८
भारतीय रेलवे (द्वितीय संशोधन) विधेयक—पारित ४१०९-४११८

मंगलवार, २७ अप्रैल, १९५४

राज्य परिषद् से सन्देश ४११९
याचिका-समिति—द्वितीय प्रतिवेदन का उपस्थापन ४११९
खाद्य स्थिति-याचिका प्राप्त ४११९
अविलम्बनीय लोक-महत्व के विषय की ओर ध्यान दिलाना—
  उत्तर बिहार को कोयला तथा सीमेंट ले जाने के लिये अपर्याप्त परिवहन सुविधायें ४१२०-४१२२
दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक—पुरःस्थापित ४१२२
कारखाना (संशोधन) विधेयक—पारित करने के लिये प्रस्ताव—असमाप्त ४१२२-४१८२
अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग ग राज्य विधान मंडल) संशोधन विधेयक—परिषद् द्वारा पारित रूप में पटल पर रखा गया ४१८२

बुधवार, २८ अप्रैल, १९५४

अविलम्बनीय लोक-महत्व के विषय की ओर ध्यान दिलाना——
माही के निकट फ्रांसीसी भारतीय पुलिस द्वारा भारतीय संघ के नागरिकों पर गोली वर्षा ४१८३–४१८४
स्थगन प्रस्ताव——
माही के निकट फ्रांसीसी भारतीय पुलिस द्वारा भारतीय संघ के नागरिकों पर गोली-वर्षा ४१८४–४१८९
कारखाना (संशोधन) विधेयक——पारित ४१८६–४१८९
अनर्हता निवारण (संसद् तथा भाग ग राज्य विधान मंडल) संशोधन विधेयक——पारित ४१८९–४२१४
समवाय विधेयक——संयुक्त समिति को सौंपने तथा परिचालित करने का प्रस्ताव——असमाप्त ४२१४–४२६०

बृहस्पतिवार, २९ अप्रैल, १९५४

गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों सम्बन्धी समिति——
सातवें प्रतिवेदन का उपस्थापन ४२६१
समवाय विधेयक——
संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव——असमाप्त ४२६१–४३३६

शुक्रवार, ३० अप्रैल, १९५४

राज्य परिषद् से सन्देश ४३३७
सदन पटल पर रखे गये पत्र——
भारत सरकार तथा नेपाल सरकार के बीच कोसी परियोजना के सम्बन्ध में हुआ समझौता ४३३७
भारत के औद्योगिक वित्त निगम के सामान्य विनियमों में संशोधन ४३३८
भारतीय कृषि गवेषणा परिषद् का १९५१–५२ वर्ष के लिये प्रतिवेदन ४३३९
तारांकित प्रश्न संख्या १२० के उत्तर में शुद्धि ४३३८
अविलम्बनीय लोक महत्व के विषय पर ध्यान आकर्षित करना——
माही में फ्रांसीसी भारतीय पुलिस द्वारा गोली वर्षा ४३३९–४३४१
स्थगन प्रस्ताव——
फ्रांसीसी भारतीय पुलिस द्वारा माही के निकट गोली वर्षा ४३४१
समवाय विधेयक——संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव——असमाप्त ४३४१–४३६०
गैर सरकारी सदस्यों के विधेयकों तथा संकल्पों सम्बन्धी समिति का सातवां प्रतिवेदन——स्वीकृत ४३६०–४३६५

केन्द्र में प्रशासन तंत्र तथा कार्य प्रणाली सम्बन्धी संकल्प--अस्वीकृत ४३६६–४३९१
हाथ करघा उद्योग के लिये साड़ियों तथा धोतियों के उत्पादन के संरक्षण संबंधी संकल्प--असमाप्त ४३९१–४४०२

शनिवार, १ मई, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र—

केन्द्रीय रेशम बोर्ड का बुलेटिन संख्या १९ ४४०३
भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक सम्बन्धी वक्तव्य ४४०३–४४०९
समवाय विधेयक--संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव--असमाप्त ४४१०–४४९६

सोमवार, ३ मई, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र—

विनियोग लेखे (डाक तथा तार), १९५१–५२ तथा लेखा परीक्षा प्रतिवेदन, १९५३ ४४९७
समवाय विधेयक—संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव--स्वीकृत ४४९७–४५५१
दण्ड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक--संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव--असमाप्त ४५५१–४५७६

मंगलवार, ४ मई, १९५४

सदन पटल पर रखे गये पत्र—

परिसीमन आयोग अन्तिम आदेश संख्या १० ४५७७
दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक—संयुक्त समिति को सौंपने का प्रस्ताव--असमाप्त ४५७७ ४६४८

GIPD—HS—477 L. S.—3-1-55—285

संसदीय वाद विवाद

(भाग २ प्रश्नोत्तर के अतिरिक्त कार्यवाही)

शासकीय वृत्तांत

लोक सभा

शनिवार, १ मई, १९५४

सभा सवा आठ बजे समवेत हुई

[**अध्यक्ष महोदय** पीठासीन हुए]

प्रश्नोत्तर

(प्रश्न नहीं पूछे गये : भाग १ प्रकाशित नहीं हुआ)

सदन पटल पर रखे गये पत्र

केन्द्रीय रेशम-बोर्ड का बुलेटिन संख्या १९

वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री (श्री टी० टी० कृष्णमाचारी) : मैं केन्द्रीय रेशम-बोर्ड द्वारा जारी किये गये मार्च, १९५४ से सम्बन्धित बुलेटिन संख्या १९, की एक प्रति सदन-पटल पर रखता हूं । **[पुस्तकालय में रखी गयी । देखिये संख्या एस०—१३४/५४]**

भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक सम्बन्धी वक्तव्य

महान्यायवादी (श्री एम० सी० सीतलवाद) : श्रीमान्, मुझे पता लगा है कि भारतीय ढोर परिरक्षण विधेयक, १९५२ नामक विधेयक के पारित करने में संसद् की क्षमता के बारे में एक सन्देह उत्पन्न हुआ है । निश्चय ही इस प्रश्न का विधेयक के गुणावगुणों से कोई सम्बन्ध नहीं है, इस प्रश्न का एकमात्र सम्बन्ध संसद् द्वारा इस विधान के पारित किये जाने की विधायिनी क्षमता से है ।

हम सब जानते हैं कि इस देश के विधायिनी अधिकार संसद् तथा राज्यों में विभिन्न हैं । संसद् का अपना विशेष क्षेत्र है । इसके बाद संसद् तथा राज्यों का एक साझा क्षेत्र है और अन्त में राज्यों का अपना एक विशेष क्षेत्र है । अन्त में एक अविशिष्ट क्षेत्र है जिसे संसद् का क्षेत्र कहा जाता है ।

जब कभी ऐसा प्रश्न उठता है तो एक स्वीकृत दृष्टिकोण से काम लिया जाता है । ऐसे प्रस्तावित विधान के बारे में विधान के सार तथा आशय को विचाराधीन रखा जाता है । यह ठीक है कि इस सार के बारे में भाषा की औपचारिक अभिव्यक्ति से फैसला नहीं किया जाता है बल्कि भाषा की तह में जाना पड़ता है तथा विधेयक के वास्तविक ध्येय और उसकी क्रियान्विति पर विचार करना पड़ता है । प्रस्तावित विधान के आशय को इस प्रकार से निर्धारित करने के बाद हमारा ध्यान विधायिनी सूचियों की ओर जाता है तथा हम उस विषय को इन सूचियों में ढूंढते हैं । यदि विषय संसद् अथवा राज्यों के अनन्य क्षेत्र में हो तो मामले का निर्णय तुरन्त हो जाता है । उस अवस्था में इसे पारित करने का अधिकार किसी न किसी विधान-मण्डल को होता है । इसके अतिरिक्त यह भी सम्भव है कि यह साझे क्षेत्र में हो, और ऐसी अवस्था

[श्री एम० सी० सेतलवाद]

में दोनों विधायिनी निकाय उस विधान को बना सकते हैं।

वर्तमान मामले में इन सिद्धान्तों को लागू करते हुए हमें सर्वप्रथम प्रस्तावित विधेयक के विषय की जांच पड़ताल करनी है। मामला और भी साफ़ हो जाता है जबकि हम उद्देश्यों तथा कारणों सम्बन्धी विवरण का निर्देश करते हैं। इसमें लिखा है कि भारत के एक कृषि प्रधान देश होने के कारण हमें भार-वाहक ढोरों की आवश्यकता है तथा दूध की कमी के कारण हमें दुधारू ढोरों की भी आवश्यकता है। इस कारण इन ढोरों के वध को रोक कर भार-वाहक ढोरों तथा दुधारू ढोरों की रक्षा करने तथा उनकी संख्या में वृद्धि करने की आवश्यकता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इस विधेयक का उद्देश्य भार-वाहक तथा दुधारू ढोरों का परिरक्षण है। इस उद्देश्य की पूर्ति की चेष्टा प्रस्तावित विधान की धारा ३ के द्वारा की गई है जो भक्षणीय तथा दूसरे प्रयोजनों से ढोरों के जान बूझ कर बध किये जाने को रोकता है, चाहे यह वध बूचड़खाने में हो अथवा सार्वजनिक या निजी स्थान में हो।

विषय निर्धारण के लिए हमें इन सारभूत उपबन्धों, प्रस्तावना तथ्य उद्देश्यों और कारणों के विवरण को देखना होगा। इन्हें देखने के बाद मुझे यह जान पड़ता है कि विधान का उद्देश्य अथवा इसका सार और प्रयोजन बिल्कुल स्पष्ट है। दूध की पर्याप्त मात्रा को उचित रूप से प्राप्त करने के लिये कृषि सम्बन्धी स्कन्ध, तथा भार-वाहक ढोरों का जो हल चलाते हैं तथा बोझ खींचते हैं, परिरक्षण अत्यन्त आवश्यक है।

विधान के सार को अथवा इसके विषय को देख कर हमें यह देखना है कि संविधान में इस विषय का क्या स्थान है। जहां तक संसद् का सम्बन्ध है, सर्वप्रथम हमें संघ-सूची को देखना पड़ता है। यह प्रथम सूची है। संघ सूची की अच्छी प्रकार से जांच पड़ताल करने के बाद मैं ऐसी कोई प्रविष्टि नहीं देख पाता हूं जिसके अन्तर्गत इस विषय को लिया जा सके अथवा जिससे इसका सम्बन्ध हो। दूसरा कदम समवर्ती विधायिनी सूची की जांच है तथा यह देखना है कि क्या उसकी किसी मद से इसका सम्बन्ध है या नहीं। इस में भी इस विषय का किसी मद से सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता है। जब हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं तो वस्तुतः इस मामले का अन्त हो जाता है। कारण यह है कि अविशिष्ट विषयों के अतिरिक्त संसद् की क्षमता अनुसूची १ तथा ३ तक अर्थात् संघ सूची तथा समवर्ती सूची तक ही सीमित है। परन्तु यह देखने के लिए कि क्या यह विषय राज्यों की विधायिनी सूची में तो नहीं है, राज्यों की विधायिनी सूची की जांच पड़ताल करना लाभदायक होगा। इसके अध्ययन से भी पता चलता है कि यह विषय स्पष्ट रूप से राज्य विधान के अन्तर्गत आता है। मेरा निर्देश प्रविष्ट संख्या १५ से है जो स्कन्ध के "परिरक्षण, संरक्षण तथा सुधार" के सम्बन्ध में है। इसके अतिरिक्त, क्योंकि इसके द्वारा देश के दूध के प्रदाय को संरक्षित करने तथा सुधारने का प्रयत्न किया गया है, संभवतः इसका सम्बन्ध जन-स्वास्थ्य से जोड़ा जा सकता है जो राज्य की विधायिनी सूची की प्रविष्टि संख्या ६ है। अतएव राज्य विधायिनी सूची की छानबीन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह विधेयक इन दो प्रविष्टियों में आता है। हम कृषि सम्बन्धी प्रविष्टि पर भी विचार कर सकते हैं क्योंकि सामान्य रूप से ढोरों के परिरक्षण से कृषि में भी काफ़ी सहायता मिलेगी। यह प्रविष्टि संख्या १४ है। हो सकता है कि प्रविष्टि संख्या २७ से भी इसका दूर का सम्बन्ध हो जो वस्तुओं के उत्पादन, प्रदाय

तथा वितरण के सम्बन्ध में है। यह कहा जा सकता है कि इस विधान का दूध के प्रदाय से सम्बन्ध है, इसका विषय प्रविष्टि संख्या २७ में वर्णित विषयों में है।

अतएव निष्कर्ष यह निकलता है कि इस विधेयक का विषय उन सूचियों में नहीं है जिनसे संसद् का सम्बन्ध है। मेरा आशय सूची संख्या १ तथा ३ से है। यह सूची संख्या २ की विभिन्न प्रविष्टियों में आता है जो राज्यों के अनन्य विधायिनी क्षेत्र से सम्बन्धित है। इससे वास्तव में मामला समाप्त हो जाता है क्योंकि इस क्षेत्र में संसद् इस विधान को पारित नहीं कर सकेगी।

अनुच्छेद ४८ में वर्णित राज्य नीति विषयक निदेशक सिद्धान्तों के बारे में एक प्रश्न पूछा जा सकता है। इस अनुच्छेद के ठीक शब्द यह हैं: "गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक ढोरों की नस्ल के वध का प्रतिषेध"। मेरा आशय अनुच्छेद ४८ के उपबन्ध के विस्तार से नहीं है। मेरा आशय केवल इतनी बात से है कि अनुच्छेद ४८ किसी प्रकार से विधायिनी क्षमता के प्रश्न से सम्बन्धित नहीं है। इस विषय सम्बन्धी अध्याय में यह निर्धारित किया गया है कि राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्त क्या हैं। परन्तु जैसा कि हम जानते हैं ये कोई विधान शीर्ष नहीं हैं तथा इनसे विधायिनी निकायों को कोई विधायिनी अधिकार नहीं मिलते हैं। हम यह भी जानते हैं कि ये निदेशक सिद्धान्त उनका कोई उल्लंघन नहीं करते हैं। यह मामला विधि न्यायालय के सामने लाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में ये निदेशात्मक सिद्धान्त न्याय-योग्य नहीं हैं। मेरे विचार से सारे मामले की स्थिति यह है।

श्री एन० सी० चटर्जी (हुगली): क्या हम इस संविधि के संसद् के अनन्य क्षेत्र में होने को प्रमाणित करने के लिए कोई वक्तव्य दे सकते हैं?

अध्यक्ष महोदय: शान्ति, शान्ति। सामान्यतः हम महान्यायवादी के वक्तव्य या अन्य वक्तव्यों पर चर्चा नहीं करते हैं। इसके अतिरिक्त यह विधेयक सदन के सामने आयेगा और उस समय आप इस बारे में कुछ कह सकते हैं।

इस समय सन्देह निवारण के लिए भी चर्चा करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

श्री राधेलाल व्यास (उज्जैन): इस अभिप्राय से कि महान्यायवादी हमारे विचारों को भी सुन सकें, क्या उनका इस विधेयक पर चर्चा होते समय उपस्थित रहना सम्भव हो सकता है?

अध्यक्ष महोदय: यदि सदन की ऐसी इच्छा है तो उनसे प्रार्थना की जा सकती है।

श्री गाडगील (पूना केन्द्रीय): अभी तक प्रथा यह रही है कि अध्यक्ष महोदय ने किसी विधेयक के अधिकारान्तर्गत अथवा अधिकार-बाह्य होने का निर्णय नहीं दिया है। क्या अब उस प्रथा का अनुसरण नहीं किया जायगा?

अध्यक्ष महोदय: दो मिनट पहले जब मैंने यह कहा था कि सदन को इस विधेयक पर चर्चा करने का अवसर मिलेगा तो इसका स्पष्टतः अर्थ यह था कि अध्यक्ष इस बारे में कोई निर्णय नहीं देगा।

सेठ गोविन्द दास (मंडला-जबलपुर—दक्षिण): अध्यक्ष महोदय, मैं यह जानना चाहता था कि यदि यह विधेयक आगे फिर बहस के लिए आने वाला है तो यह कब आवेगा, क्योंकि जिस समय मैंने इसका मुल्तवी किया जाना स्वीकार किया था उस समय मैंने यह कह दिया था कि मैं यह नहीं चाहता कि यह विधेयक फिर से गैर सरकारी दिन आय क्योंकि उसमें बैलट का झगड़ा पड़ता है, और पालियामेंटरी एफेअर्स के जो मंत्री महोदय

[सेठ गोविन्द दास]

हैं उन्होंने इस बात का आश्वासन दिया था कि इसी सेशन में किसी न किसी सरकारी दिन ले आया जायगा। अब यह अधिवेशन २१ मई को समाप्त हो रहा है। तो मैं यह जानना चाहता था कि उनके आश्वासन के अनुसार यह किस सरकारी दिन आयेगा, क्योंकि उन्होंने ही यह आश्वासन दिया था कि यह सरकारी दिन आ सकता है। मैं नहीं चाहता कि इसको इस तरह मुल्तवी कर दिया जाय ताकि यह न इस सेशन में आ सके और न अगले सेशन में आ सके और बैलट के झगड़े में पड़ जाय। सरकार इस विषय में क्या करना चाहती है यह सरकार को घोषित करना चाहिये क्योंकि देश यह जानना चाहता है कि सरकार इस विषय में क्या करना चाहती है। यह विषय सारे देश में इतने महत्व का हो गया है कि वह चाहता है कि यह किसी न किसी सरकारी दिन आ जाय और इसी सेशन में हो जाय।

अध्यक्ष महोदय : मैं तो यह समझता हूं कि सरकार को जैसा योग्य लगे उसी रीति से वह निवेदन करे। अभी जो स्टेटमेंट एटार्नी जनरल साहब ने दिया है उसके साथ इसका कुछ सम्बन्ध नहीं है। उन्होंने तो लीगल पोजीशन के बारे में अपनी राय दी है। तो यह इतना ही है। लेकिन जैसा मैंने अभी कहा कि जब यह बिल आयेगा, मैं नहीं जानता कि कब आयेगा, उस वक्त अभी जो चर्चा चल रही है वह हो जायगी।

सेठ गोविन्द दास : कब आयेगा ?

अध्यक्ष महोदय : कब आयेगा, यह तो आप मिनिस्टर साहब से मिल कर तै कर लें।

सेठ गोविन्द दास : आप उनसे पूछ लें।

अध्यक्ष महोदय : हमारा इससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

समवाय विधेयक (जारी)

अध्यक्ष महोदय : सदन अब श्री सी० डी० देशमुख के २८ अप्रैल, १९५४ को प्रस्तुत किये गये समवायों तथा कुछ अन्य संस्थाओं सम्बन्धी विधि के एकीकरण तथा संशोधन करने वाले विधेयक को दोनों सदनों की एक संयुक्त प्रवर समिति को सौंपे जाने सम्बन्धी प्रस्ताव पर अग्रेतर चर्चा करेगा।

श्री साधन गुप्त (कलकत्ता—दक्षिण पूर्व): माननीय वित्त मंत्री ने इस प्रस्ताव पर बोलते समय इस विधेयक के उद्देश्यों के बारे में कहते हुए सामाजिक उद्देश्य का भी वर्णन किया था। हम कम्युनिस्टों का वास्ता मुख्यत: सामाजिक उद्देश्य से है, परन्तु हमारा सामाजिक उद्देश्य बहुत विस्तृत प्रकार का है। हम देश को औद्योगीकरण के द्वारा उन्नति के पथ पर ले जाना चाहते हैं तथा इस मार्ग में पड़ने वाली प्रत्येक रुकावट को दूर करना चाहते हैं।

यह ठीक है कि हम सामान्यत: निजी उद्यम के विरुद्ध हैं, परन्तु हम इसका पूर्णत: विरोध नहीं करते हैं। हम साम्यवादी यह अनुभव करते हैं कि हमारे जैसे पिछड़े देश में जहां श्रम अभी इतना सुसंगठित तथा प्रवीण नहीं हुआ है कि उद्योगों का स्वयं प्रबन्ध कर सके, सामाजिक अर्थ-व्यवस्था का एक दम स्थापित करना सम्भव नहीं है। अभी हमारी अर्थ व्यवस्था में निजी उद्यम का महत्वपूर्ण भाग है फिर भी यह भाग बहुत अधिक नहीं होना चाहिये। हमारा उद्देश्य यही है। इसी कारण हम चाहते हैं कि देश के औद्योगिक विकास में निजी क्षेत्र को अपना अंशदान देने में समर्थ बनाने के लिए हम इसके मार्ग से प्रत्येक विद्यमान बाधा को दूर करना चाहते हैं।

प्रश्न यह है कि क्या यह समवाय विधि उन बाधाओं को दूर कर सकेगी जो हमारे

औद्योगिक विकास में आज हैं ? इस दृष्टि से देखने पर विधेयक उपयोगी नहीं दिखता।

हमारे औद्योगिक विकास में मुख्य दो वस्तुएं बाधक हैं—जमींदारों द्वारा किया गया शोषण तथा विदेशी उद्योगों की स्पर्धा। पहली बाधा इस विधि से दूर नहीं की जा सकती परन्तु दूसरी बाधा इससे अवश्य ही हटाई जा सकती है।

डा० नायर ने बतलाया है कि किस तरह विदेशी अपनी थोड़ी सी पूंजी से हमारे उद्योगों पर अधिकार जमाए हुए हैं। मैं वे ही बातें फिर न कहूंगा।

भारत में एकाधिकार भी बढ़ रहे हैं जिनके हाथों में पूंजी का संकेन्द्रण होता जा रहा है। इससे भी औद्योगिक विकास में बाधा पहुंचती है।

विदेशी पूंजीपति हमारी अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण अंगों का नियन्त्रण करते हैं। पैट्रोलियम उद्योग का ९७ प्रतिशत अंश उनके हाथों में है, माचिसों का ९० प्रतिशत, जूट का ८९ प्रतिशत, चाय का ८६ प्रतिशत, कोयले का ६२ प्रतिशत नियन्त्रण उनका ही है।

प्रबन्धक अभिकरण (मैनेजिंग एजेंसी) पद्धति के कारण हमारे देश में उद्योगों का विकास नहीं हो पाया है। इसके कारण छोटे उद्योगपति पनपने ही नहीं पाते। ये कराप-वंचन भी करते हैं।

श्री चटर्जी ने कहा कि हमें यह पद्धति बनाये रखना चाहिये क्योंकि देश में सुसंगठित पूंजी बाजार नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि यदि इस पद्धति के दोषों को दूर कर दिया जाय तो इससे लाभ भी उठाया जा सकता है। वास्तव में बात यह है कि जब तक इस पद्धति को सर्वथा नहीं हटा दिया जाता तब तक देश में संगठित पूंजी बाजार बन ही नहीं सकता उनके हटाने से ही संगठित पूंजी बाजार बन सकेगा। इस पद्धति के दोषों को हटा कर उपयोगी बनाना सम्भव नहीं है। श्री टेकचन्द ने गीध की उपमा दी। गीध के नख तथा पर काटने से काम न बनेगा उसे तो मार ही डालना चाहिए।

श्री चटर्जी ने कहा कि कुछ ही प्रबन्धक अभिकर्ता खराब हैं तथा शेष अच्छे हैं। प्रश्न उनकी संख्या का नहीं है। प्रश्न तो यह है कि वे प्रबन्धक अभिकर्ता कैसे हैं जो हमारे देश की अर्थ व्यवस्था के महत्वपूर्ण अंगों पर प्रभुत्व जमाए बैठे हैं। यदि वे खराब हैं तो उनका हटाना उचित है। वास्तव में ये बड़े अभिकर्त्ता ही दूषित हैं तथा ये देश का शोषण कर रहे हैं।

श्री चटर्जी ने श्री लैंगफोर्ड जेम्स द्वारा अपने अपराध के स्वीकार किये जाने का जो उद्धरण दिया है उससे प्रबन्ध अभिकरणों की न्यायालयों के वातावरण तक को दूषित करने की कुटिल कार्यवाहियों का भण्डाफोड़ हो जाता है। हम ऐसे उद्योगपतियों के द्वारा अपने गैर सरकारी उद्योगों को बढ़ाना नहीं चाहते हैं। हम ऐसे उद्योगपति चाहते हैं जो उद्योगों की निर्बाध रूप से उन्नति करें और जो आजकल के बड़े बड़े प्रबन्ध अभिकरण समवायों जैसे नहीं जो उनमें रोड़े अटकाते हैं।

श्री आल्तेकर तथा अन्य सदस्यों ने यह कहा था कि हम गैर सरकारी उद्योग के प्रति वचनबद्ध हैं, हम प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली को नहीं हटा सकते हैं। यह तर्क समझ में नहीं आता है। कौन सी धर्म पुस्तक में यह लिखा हुआ है कि गैर सरकारी उद्योगों के साथ प्रबन्ध अभिकरण भी होने ही चाहियें। हम जानते हैं कि हमारे यहां बैंकिंग तथा बीमा समवायों का प्रबन्ध अभिकरणों द्वारा किये जाने की मनाही है। यह कहां का तर्क है कि ३५ या ४० भारतीय तथा विदेशी समवायों के हित के लिये औद्योगिक विकास के

[श्री साधन गुप्त]

उचित साधनों के अपनाये जाने का विचार नहीं करना चाहिये ?

दो और युक्तियां दी गई थीं : एक श्री टामस ने दी थी और दूसरी श्री पांडे ने । श्री टामस ने यह पूछा था कि यदि प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली को हटा दिया जाये, तो क्या सरकार देश के आन्तरिक भागों के औद्योगीकरण का उत्तरदायित्व ले सकती है ? मैं यह पूछना चाहता हूं कि टाटा, बिरला, एन्ड्रयू या बर्डस ने कितने ग्रामों का औद्योगीकरण कर दिया है ? श्री पांडे ने एक असाधारण युक्ति दी थी कि प्रबन्ध अभिकरण प्रतिव्यक्ति अधिक सस्ता प्रबन्ध करता है । किसी माननीय सदस्य ने टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के सम्बन्ध में आंकड़े बताये थे । उनके अनुसार वेतनादि के अतिरिक्त प्रबन्ध अभिकरण शुद्ध लाभ के ५$\frac{1}{2}$ प्रतिशत में से एक प्रतिशत ले लेते हैं । कुल बिक्री का एक प्रतिशत शुद्ध लाभ का लगभग २० प्रतिशत पड़ता है । उन्होंने इसे प्रबन्ध अभिकरणों के संयम का उदाहरण बताया है । अतः हम यह समझ सकते हैं कि वह सामान्यतया इस अंश से अधिक भी लेते होंगे ।

अतः हम यह चाहते हैं कि इस विधि में ऐसे उपबन्ध बनाये जायें जिनमें विदेशी और विशेष रूप से ब्रिटिश समवायों को थोड़े से लाभ के अतिरिक्त शेष सारा लाभ अपने देशों को न ले जाने दिया जाये । हम यह चाहते हैं कि ऐसे उपबन्ध बनाये जायें जिनके द्वारा विदेशी उपक्रम को हमारी अर्थव्यवस्था के महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे पैट्रोलियम, पटसन, कोयला इत्यादि से निकाल दिया जाये । हम यह चाहते हैं कि जहां देशी उपक्रम चल रहे हों या चल सकते हों वहां विदेशी औद्योगिक उपक्रम पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाये । हम सभी विदेशी तथा देशी एकाधिपत्यों को, विशेषतया वर्तमान प्रबन्ध अभिकरणों को तोड़ कर प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली को समाप्त कर देना चाहते हैं । राजकोष या कर्मचारियों को धोखा देने अथवा धन को देश से बाहर भेजने के लिये किये गये बुरे कार्यों पर नियंत्रण करने और दण्ड देने के लिये कठोरतम उपबन्ध बनाये जाने की आवश्यकता है । यह सब कुछ इस विधेयक के क्षेत्र में किया जा सकता है और हम यह चाहते हैं कि प्रवर समिति इस प्रकार के उपबन्धों को अन्तर्निविष्ट करने के लिये इसमें उचित संशोधन करे ।

अब मैं कर्मचारियों के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहना चाहता हूं । संयुक्त स्कन्ध समवायों में बहुत से कर्मचारी सेवायुक्त हैं और बहुत से संयुक्त स्कन्ध समवाय कर्मचारियों को धोखा देने के लिये विभिन्न तरीके प्रयोग में लाते हैं । मैं कुछ चुने हुए उदाहरण देता हूं । हानि दिखाने का एक तरीका तो लेखे में हेर-फेर करना है । उदाहरण के लिये मुझे ज्ञात हुआ है कि हैदराबाद राज्य के एक समवाय, सिंगरेनी कोलफील्ड्स, लिमिटेड में कुछ पूंजी विनियोग को सन्तुलन पत्र में राजस्व लेखे का व्यय दिखाया गया है और इस प्रकार लाभ की मात्रा को कम कर दिया गया है या कुछ हानि दिखा दी गई है । यह प्रथा बहुत से समवायों में चलती है । इसी प्रकार विदेशी समवाय भी अपने स्थानीय लाभों को, अपने प्रधान या मूल कार्यालयों या अपने देश में अपने सम्बद्ध समवायों के नाम से जमा करके, कम करने का प्रयत्न करते हैं । इस प्रकार वे अपने लाभ को कम कर देते हैं या हानि दिखा देते हैं । इसी प्रकार कमीशन अभिकर्त्ता के रूप में कार्य करते हुए वे हानि उठाने का बहाना करते हैं जबकि उनके देश में उनके मूल समवाय बहुत अधिक लाभ कमाते हैं । कर्मचारियों के दावों में बेईमानी

करने का, विशेषतया जबकि उनका कोई दावा श्रम न्यायाधिकरण ने मंजूर कर लिया हो, एक और तरीका आस्तियों को धोखे से स्थानान्तरित करने का भी है। इन सब का हमें ध्यान रखना होगा। हमारी वर्तमान विधि में कठिनाई यह है कि बेचारे कर्मचारी विदेशी या देशी उद्योगपतियों के साधनों का पता नहीं लगा सकते हैं। प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली को समाप्त कर देने से इनमें से कुछ हेर-फेर की बुराइयां तो कम हो जायेंगी और शेष के सम्बन्ध में इस विधेयक में व्यवस्था कर दी जानी चाहिये।

वर्तमान प्रक्रिया के कारण कर्मचारी उद्योगपति को आस्तियों को धोखे से स्थानान्तरित करने से नहीं रोक सकते हैं, क्योंकि व्यवहार प्रक्रिया संहिता के अनुसार समस्त मजदूर एक साथ मिल कर नहीं अपितु प्रत्येक मजदूर व्यक्तिगत रूप से इसके लिये प्रार्थनापत्र दे सकता है और प्रत्येक मजदूर के पास इसके लिये आवश्यक धन नहीं होता है। इसके साथ ही एक मजदूर केवल अपनी मजदूरी के लिये दावा कर सकता है, वह सारी आस्तियों के हस्तान्तरित किये जाने को नहीं रोक सकता है। यद्यपि इस विषय का सम्बन्ध व्यवहार प्रक्रिया संहिता से है, किन्तु समवाय विधि में संशोधन करके संयुक्त स्कन्ध समवायों के सम्बन्ध में सामूहिक रूप से या मजदूर संघों के द्वारा प्रार्थना पत्र दिये जाने की व्यवस्था कर दी जानी चाहिये।

कर्मचारियों के सम्बन्ध में एक और बात खंड ४९२ के अन्तर्गत भुगतान क्रम की प्राथमिकता के बारे में है। मेरी यह समझ में नहीं आता है कि सरकारी करों को कर्मचारियों को किये जाने वाले भुगतान की अपेक्षा प्राथमिकता क्यों दी गई है। समवाय के बन्द हो जाने से सरकार की तो कुछ लाख की हानि होगी, किन्तु कर्मचारी तो मारे जायेंगे।

सारांश यह कि यह विधेयक देश के औद्योगीकरण की अत्यधिक आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए और राष्ट्र के लोगों को सुखी तथा सम्पन्न व शक्तिशाली बनाने की दृष्टि से बिल्कुल व्यर्थ है। प्रत्येक अंग्रेज़ी चीज़ की नकल करने की प्रवृत्ति के कारण सरकार ब्रिटिश समवाय विधि तथा भारतीय समवाय विधि की समस्याओं में भेद नहीं कर सकी है। इसी राष्ट्र-विरोधी तथा दासता की मनोवृत्ति के कारण हमने अंग्रेजी विधि की नकल करके सर्वोच्च राष्ट्रीय हितों का ध्यान नहीं रखा है और निहित स्वार्थों को संरक्षण दिया है। जब तक प्रवर समिति इस विधेयक को आमूल संशोधित करके इसमें राष्ट्रीय हितों को सुदृढ़ बनाने के उपबन्ध सम्मिलित नहीं करती है तब तक लोगों में इसके प्रति कोई उत्साह पैदा नहीं हो सकता है।

वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री (श्री टी० टी० कृष्णमाचारी) : अध्यक्ष महोदय, मुझे प्रसन्नता है कि मुझे पूर्व वक्ता के पश्चात् बोलने का अवसर प्राप्त हुआ है।

श्री यू० एम० त्रिवेदी (चित्तौड़) : श्रीमान्, मैं एक औचित्य प्रश्न पूछना चाहता हूं। मैं देखता हूं कि इस विधेयक के साथ अनुच्छेद ११७ के अन्तर्गत आवश्यक, कोई प्रमाणपत्र नहीं लगाया गया है। इस विधेयक में कुछ फीसों के आरोपण की व्यवस्था है जिन्हें अनुच्छेद ११० के उपबन्धों द्वारा अपवाद नहीं बनाया गया है। अतः यह धन विधेयक की परिभाषा के क्षेत्र में आ जाता है, क्योंकि अनुसूची १ की तालिका ख के उपबन्धों में कुछ फीसों की दरें दी हुई हैं जो कि हुई सेवाओं के लिये फीस नहीं है या सेवा के बदले फीस नहीं मानी जाती है। वे निश्चय ही किसी अनुज्ञप्ति सम्बन्धी फीसों के रूप में नहीं हैं; अनुच्छेद ११०, खण्ड (२) के अन्तर्गत यह अपवाद दिया हुआ है :

> "कोई विधेयक केवल इस कारण से धन-विधेयक न समझा जायेगा

[श्री यू० एम० त्रिवेदी]

> कि बहुजुर्मानों या अन्य अर्थ-दण्डों के आरोपण का, अथवा अनुज्ञप्तियों के लिये फीसों की, अथवा की हुई सेवाओं के लिये फीसों की, अभियाचना का या देने का, उपबन्ध करता है, अथवा इस कारण से कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिये किसी कर के आरोपण, उत्सादन, परिहार, बदलने या विनियमन का उपबन्ध करता है ।"

यह पंजीयन फीस किसी प्रकार भी अनुच्छेद ११०(२) के क्षेत्र में नहीं आती है, अतः मेरा यह निवेदन है कि अनुच्छेद ११७ के अधीन इस समवाय विधेयक के साथ एक प्रमाणपत्र होना चाहिये और क्योंकि इस के साथ वह प्रमाणपत्र नहीं लगाया गया है अतः इस पर आगे विचार नहीं किया जा सकता है ।

अध्यक्ष महोदय : क्या माननीय विधि मंत्री को इस विषय में कुछ कहना है ?

विधि तथा अल्प-संख्यक-कार्य मंत्री (श्री बिस्वास) : आरम्भ में यह प्रश्न नहीं उठाया गया था । इस की परीक्षा कराने के लिये मुझे कुछ समय चाहिये । क्योंकि यह देखने के लिये कि इस अनुसूची में दी हुई फीसें अपवादों के अन्दर आती हैं या नहीं इस की ध्यान से परीक्षा करनी होगी ।

अध्यक्ष महोदय : तो वाद विवाद जारी रहे । इस विषय की परीक्षा की जायेगी; मैं विधि मंत्री के विचार सुनूंगा और उस के बाद इस प्रश्न का निश्चय किया जायेगा ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : कुछ क्षण पूर्व मैं ने कहा था कि मेरे पूर्व वक्ता ने एक प्रकार से इस विधान के विरोध को स्पष्ट कर दिया है और अपने भाषण के उपसंहार में बता दिया है कि वह यह समझते हैं और उन के जैसे विचारों वाले और लोग भी यह समझते हैं कि इस विधान से कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि इस में कुछ ऐसी बातें करने की व्यवस्था नहीं है जो निश्चित रूप से इस विधेयक के क्षेत्र से बाहर हैं ।

मैं समझता हूं कि मेरे सहयोगी प्रस्तावक ने अपने प्रारम्भिक भाषण में इस विधेयक में जो कुछ दिया हुआ है उससे अधिक या कम कोई दावा नहीं किया है । श्रीमान्, यह तो मानना पड़ेगा कि समवाय कुछ शर्तों के अधीन कार्य करते हैं । यदि समवायों को अलग अलग शर्तों के अधीन कार्य करना पड़े—वे विभिन्न प्रकार के समवाय हो सकते हैं—तो सम्भवतः वे समवाय न रहें और किसी अन्य ही प्रकार के संगठन बन जायें । परन्तु, हमारे इस सीमित क्षेत्र में कुछ मूल बातें मान ली जाती हैं और यदि वे बातें न मानी जायें तो मैं समझता हूं कि मेरे पूर्ववक्ता माननीय सदस्य का यह कहना बिल्कुल ठीक है "कि मेरा इस विधान से कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि यह मेरे इन विचारों से मेल नहीं खाता है कि इस देश का प्रशासन कैसे होना चाहिये और यह उन बहुत से विधानों में से एक है जो एक ऐसी सरकार को स्थायी बनाना चाहते हैं जिस पर मुझे कोई भरोसा नहीं है ।" यदि उन की मूल आपत्ति यही है तो मेरे विचार में माननीय सदस्य का यह कहना बिल्कुल ठीक है ।

श्रीमान्, मेरी यह इच्छा नहीं है कि मैं किसी उत्कृष्ट व्यक्ति के समान इस विधान के सम्बन्ध में सदन के माननीय सदस्यों द्वारा दिये गये भाषणों को विषय से बाहर बता कर उन की आलोचना करूं । परन्तु यह कहना आवश्यक प्रतीत होता

है कि चर्चा के रुख से यह पता चलता है कि सदन के समक्ष इस विधान ने जो समस्यां उपस्थित की है या तो उसे समझा नहीं गया है अथवा इस विधान को ठीक प्रकार से समझने के लिये जिस हद तक उसे समझना आवश्यक है उस हद तक समझा नहीं गया है। जैसा कि मैं ने कहा समवाय विधि की मूल बातों को पहले मानना पड़ेगा। यदि आप इन बातों की वैधता को नहीं मानते हैं, तो स्पष्ट है कि आप समवाय विधि पर चर्चा नहीं कर सकते हैं। समवाय विधि व्यर्थ हो सकती है किन्तु इस का यह अर्थ नहीं है कि अन्य लोग जो इन बातों को मानते हैं समवाय विधि की मांग नहीं कर सकते हैं।

किसी समवाय का आधार क्या होता है ? एक संयुक्त स्कन्ध समवाय का आधार यह होता है कि निजी व्यक्तियों का बचा हुआ धन उचित आय की आशा से औद्योगिक तथा व्यवसायिक उपक्रमों में लगाये जाने के लिये एक समवाय में रख दिया जाता है। "उचित आय" के बहुत से अर्थ लगाये जा सकते हैं। सम्भव है कोई व्यक्ति कुछ खतरा उठा कर उचित आय से कुछ अधिक प्राप्त करने के लिये इन समवायों में धन लगाये। सम्भव है कोई व्यक्ति, जो जान बूझ कर किसी समवाय में धन लगाता है सरकारी प्रतिभूति या बैंक में जमा करने से जो धन मिलता है उस से अधिक धन चाहता हो, क्योंकि उस के विचार में उस समवाय की दृढ़ता व्यापार की स्थिरता, उस समवाय द्वारा तैयार की गई वस्तु की मांग की स्थिरता परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है और सम्भव है उसे उस की विनियोजित पूंजी पर देर तक आय न हो और इसलिये वह अधिक आय पसन्द करे। मेरे विचार में किसी बैंक या सरकारी प्रतिभूति में लगाई गई पूंजी की तुलना में किसी व्यापार में लगाई गई पूंजी के सम्बन्ध में यह धारणा थोड़ी बहुत उचित ही है।

समवाय प्रणाली के साथ एक और मूल बात यह है कि यह किसी उपक्रमी के साथ संलग्न होती है। समवाय की पूंजी रचना में भाग लेने वाले बचत के धन को बाहर निकलने का रास्ता देने और आवश्यक प्रोत्साहन देने के लिये यह उपक्रमी प्रणाली एक आवश्यक अंग है। ऐसा नहीं होता कि समवाय के स्थापित किये बिना ही पूंजी आ जाये। किसी को यह करना पड़ता है और वह प्रवर्तक होता है। प्रवर्तक कोई एक व्यक्ति हो सकता है या कुछ व्यक्तियों का गुट भी हो सकता है। सम्भव है वह कोई भावी प्रबन्धक अभिकर्ता हो और सम्भव है वह एक ऐसे एकाधिकारी, "स्वल्पाधिकारी" या "अनेकाधिकारी" प्रकार के संगठन से सम्बन्ध रखने वाला व्यक्ति हो जो भारत के लोगों को और विश्व के सारे लोगों को बहुत कष्ट पहुंचा रहा हो, किन्तु फिर भी कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जो इस विषय में सक्रिय रूप से भाग ले और जो पूंजी विनियोग को आकर्षित करने के लिये एक आकर्षक अभिकर्ता जैसा कार्य करे जिस से कि पूंजी उत्पादनशील साधनों में लगाई जा सके और विनियोजकों को आय भी दे सके। यह बहुत सरल है और इस के लिये बहुत ही सरल प्रस्ताव रखा गया है, किन्तु तो भी ऐसा प्रतीत होता है कि सदन के समक्ष प्रस्तुत इस विधान की चर्चा के सम्बन्ध में इस प्रस्ताव को ठीक प्रकार से समझा नहीं गया है। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूं कि इस विषय में हम सब के अपने अपने विचार हैं। आज मैं सरकार का एक सदस्य हूं, किन्तु कुछ समय पूर्व मैं सरकार का सदस्य नहीं था और इस विषय में मेरे अपने विचार भी हैं जिन्हें मैं भूतकाल में प्रकट कर चुका हूं और सम्भव

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

है चिरायिन्किल के मेरे माननीय मित्र मेरे किन्हीं पिछले भाषणों से उद्धरण ले कर उद्धृत करें—और हो सकता है उनकी बात ठीक हो । 'पूंजीवादी' समाज के सम्बन्ध में हमारे अपने विचार हैं । हमें इस सामाजिक व्यवस्था पर गर्व नहीं है, न ही हम इस सामाजिक व्यवस्था को स्थायी बनाना चाहते हैं । कुछ मूल बातें हैं जिन्हें हम ऐसी बुराइयों के रूप में सहन करते हैं क्योंकि उन से भलाई होती है, अथवा क्योंकि हमारे पास उन के स्थान पर रखने को कुछ नहीं है । यदि मेरे माननीय मित्र श्री साधन गुप्त कहते हैं, "मैं इस विधान को स्वीकार नहीं करता हूं; मैं यह चाहता हूं कि इस विधान को अस्वीकृत कर दिया जाये", तो उस का परिणाम क्या होगा ? यह होगा कि वर्तमान समवाय विधेयक अपनी सारी बुराइयों तथा कमियों के सहित जारी रहेगा ।

श्री साधन गुप्त : मैं ने यह कहा था कि मैं यह चाहता हूं कि प्रवर समिति इस विधान में संशोधन करे और मैं ने अपने भाषण में जिन उपबन्धों की सिफारिश की थी उन्हें इस में सम्मिलित कर ले । मैं ने यही कहा था । मैं ने "इसे अस्वीकृत कर दिया जाये" शब्दों का कभी प्रयोग नहीं किया और मुझे पूर्ण निश्चय है कि इस विधान के वर्तमान स्वरूप से इसके प्रति लोगों को कोई उत्साह नहीं होगा ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : माननीय सदस्य को गलत रूप में प्रस्तुत करने की मेरी ज़रा भी इच्छा नहीं है । सम्भव है मेरी युक्तियां संक्षिप्त होने की अपेक्षा विशद हो गई हों । सम्भव है यह बात केवल उदाहरण के रूप में कही गई हो और इस का यह अर्थ नहीं है कि माननीय सदस्य ने बिल्कुल यही शब्द कहे हैं । मैं ने उन की सारी बात को न कह कर एक उदाहरण मात्र दिया है । मुझे निश्चय ही इस का खेद है और यदि माननीय सदस्य ने यह समझा हो कि मैं ने उन्हें किसी प्रकार से ग़लत रूप में प्रस्तुत किया है, तो मैं उन से क्षमा मांगना चाहूंगा; मेरा यह इरादा या विचार नहीं है ।

मैं पूंजीवादी समाज की बुराइयों को मानता हूं । यदि हम उन्हें न मानें, तो विनियमन तथा नियंत्रण द्वारा हम सामाजिक तथा आर्थिक मामलों में जान-बूझ कर सरकारी हस्तक्षेप करके जो कुछ करते हैं वह सब बिल्कुल निरर्थक हो जाये । हम यह मानते हैं कि बुराई के ऐसे साधन हैं जिन का उपयोग प्रवर्तक अपने निजी उद्देश्यों के लिये या अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये करते हैं और वे ऐसे प्रयोजनों के लिये उन का प्रयोग करते हैं जिन्हें वे अपने दृष्टिकोण से सम्भवत: विधिसंगत समझते हों और जिन का मेरे विरोधी पक्ष के मित्र "शोषण" कह कर विरोध करते हैं । यह उनके अपने हितों को बढ़ाने के लिये हो सकता है, और यह अपने हितों को बढ़ाने का नम्र मार्ग है । हमारे सामने यह प्रश्न नहीं है । यह आर्थिक व्यवस्था का पूर्ण पुनः संगठन करने या समवाय विधि के द्वारा इस प्रणाली के साथ साथ चलने वाली अन्य सामाजिक बुराइयों को पूर्णतया निकाल देने का प्रश्न नहीं है । यदि सदन के इस ओर के किसी व्यक्ति ने यह दावा किया है, तो मैं विरोधी दल के सदस्य को अनुमति देता हूं कि वह यह कहने का पूर्ण रूप से हकदार है कि "इसे हटा दो, यह दावा पूर्णतया निस्सार है ।" किसी भी व्यक्ति ने ऐसा दावा नहीं किया है अथवा यह नहीं कहा है कि समवाय विधि के इस साधन के द्वारा, हम आर्थिक व्यवस्था को बदलने जा रहे हैं, हम विभिन्न हितों के बीच जिनका शोषण किया जाता है तथा जो शोषण करते हैं, न्यायनिर्णय

कर रहे हैं, अथवा हम मालिक और सेवक, तथा नियोजक और कर्मचारी के सम्बन्धों में हस्तक्षेप करने जा रहे हैं । ऐसी बात नहीं है । इसका आर्थिक गठन पर बहुत ही सीमित प्रभाव है और उद्देश्य भी बहुत सीमित है । इसलिये, यदि हम इस उपक्रम में ऐसे उद्देश्यों और हेतुओं का आरोप करते हैं, जिसे आप किसी भी कल्पना की उड़ान से प्राप्त नहीं कर सकते हैं तो निस्सन्देह, यह उपक्रम भद्दा प्रतीत होगा ।

दूसरा प्रश्न यह है कि हमारी अवश्य कुछ मूल धारणायें हैं । जैसा मैं ने बताया, समवाय के अस्तित्व का मतलब यह है कि बचत के लिये बाजार हैं, तथा ऐसे व्यक्ति हैं जो बचत करते हैं और उस धन को काम में लगाना चाहते हैं । इन सब विनियोजनों का उपयोग करने की आवश्यकता है । सहायक अभिकर्ता होते हैं, जो इन विनियोजकों का प्रयोग उत्पादक उद्देश्यों के लिये करते हैं, अर्थात् व एक उद्योग स्थापित करते हैं या स्थापित करने के प्रयास करते हैं जिनके द्वारा देश का धन बढ़ता है, और अन्ततः इस मामले विशेष में, लाभ मुख्यता समाज को होता है और बड़े आशय में व्यक्तिगत विनियोजक को भी लाभ पहुंचता है । यदि इस मामले पर, व्यक्तिगत विनियोजक के दृष्टिकोण से विचार किया जाये--समवाय, समवाय-प्रवर्तक, या मुख्यतया समवाय के प्रबन्धक और तब बाद में योजना के रूप में, जो समस्त अर्थ व्यवस्था के लिये उपयुक्त है --तब इस उपक्रम पर होने वाला वाद-विवाद वास्तव में गम्भीर रूप धारण करेगा । इस का यह अर्थ नहीं है, क्योंकि इस में व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से बचत करने और धन लगाने की बात है, और दूसरी ओर एक अन्य व्यक्ति है, जिस पर वह विश्वास करता है, और जो उस धन को धनोत्पत्ति के लिये काम में लाने को प्रस्तुत है तथा विनियोजक को लाभ देता है, अतः सरकार को हाथ बांध कर बैठ जाना और कहना चाहिये "हम हस्तक्षेप नहीं करेंगे ।" यदि यह इरादा है, तो समवाय विधि की कोई आवश्यकता नहीं है, और समय समय पर समवाय विधि में संशोधन करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है ।

मेरे माननीय मित्रों ने कहा कि कुछ सीमित हेतु हैं, जिन्हें हम बिल्कुल भूल नहीं सकते हैं । कल्याणकारी राज्य, जो कुछ भी करे, कुछ सामाजिक हेतुओं के परिरक्षण की आवश्यकता की अवहेलना नहीं कर सकता है और हम व्यक्तियों की किसी श्रेणी के हाथों में शक्ति और प्रभाव नहीं दे सकते हैं, और न उन्हें इनका दुरुपयोग करने की अनुमति दे सकते

श्री टी० एन० सिंह ने कहा था "यह उपक्रम विशेष राष्ट्रीयकरण के सम्बन्ध में क्या करने जा रहा है" निस्सन्देह यह उपक्रम राष्ट्रीयकरण के सम्बन्ध में कुछ नहीं कर सकता है--उत्तर सरल है । यह बिल्कुल भी राष्ट्रीयकरण को नहीं बढ़ा सकता है, क्योंकि उद्योगों का राष्ट्रीयकरण बिल्कुल विभिन्न बात है और आप समवाय विधि द्वारा उद्योगों का राष्ट्रीयकरण नहीं कर सकते हैं । एक बार यहां राष्ट्रीयकरण का विचार आता है तो इस का मतलब यह होता है कि सरकार लोगों की बचत को लेकर धन का उपबन्ध करने और उस बचत को उत्पादन उद्देश्यों के लिये प्रयोग में लाने का उत्तरदायित्व लेती है और निजी विनियोजक तथा उद्योगपति का यह सामान्य प्रश्न बिल्कुल उत्पन्न ही नहीं होता है । वह हमारा मतलब नहीं है । यदि राज्य उस प्रकार का हो, जिसकी दूसरे दल के लोग कल्पना करते हैं, तब इस प्रकार की समवाय विधि आवश्यक नहीं है ।

समवाय प्रणाली द्वारा उपबन्धित एकाधिकार की वृद्धि पर भी काफ़ी वाद विवाद

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

हुआ है। संभवतः यह सच है। हो सकता है कि समवाय प्रणाली ने इसका उपबन्ध किया हो, यह हो सकता है कि यह सामान्य प्रक्रिया के द्वारा आया हो, या जिसकी कोई राजनैतिक या आर्थिक पृष्ठ भूमि हो, जैसा कि अन्य देशों में है। यह सच है कि उन देशों में भी जहां इस प्रकार की समवाय विधि नहीं है, जैसी कि भारत में है, वहां भी विभिन्न प्रकार के एकाधिकारों की प्रणालियां पैदा हो गई हैं। और वास्तव में यदि हम कुछ लोगों के हाथों में धन के केन्द्रीकरण के प्रश्न पर वादविवाद करते होते, या उपभोक्ता को प्रभावित करने वाली एकाधिकार प्रणाली से सम्बंध रखने वाले किये उपक्रम पर चर्चा करते होते तो यह अनुमान कैसे लगाया जाता है कि यह किस प्रकार प्रतिद्वन्द्विता को या अपूर्ण प्रतिद्वन्द्विता को जो अर्थ व्यवस्था में वर्तमान है समाप्त करने का प्रयत्न करती हैं तो मैं समझता हूं कि ये सब चीजें अपने उचित अनुदर्शन में आ जातीं। तब हमें इन बुराइयों को दूर करने के उपायों का विचार करना होता, यदि यह बुराइयां इतनी बड़ी हैं, जितनी दर्शायी गई हैं। दूसरे देशों ने इस को सुलझाया है। अमरीका जैसे विशुद्ध पूंजीवादी देश ने, जहां मुक्त प्रतिद्वन्द्व है, एकाधिकार की वृद्धि होते देखी है, उपक्रम के सामान्यहेतु को कम करने वाले तत्वों की वृद्धि होते देखी है, महाजनों की समाप्ति द्वारा उद्योगों के लिये साधारण वित्त की कमी या अनुपस्थिति, औद्योगिक क्षेत्र और बड़े औद्योगिक निगमों की वृद्धि में बहुत बड़ी मात्रा तक, ये सब चीज़ें देखी हैं। उन्होंने उस समस्या का एक ऐसे देश में भी निपटारा करने का प्रयत्न किया है, जो निश्चय ही पूंजीवादी है। वास्तव मे, उस प्रकार की आकस्मिकता में, जहां एकाधिकार शक्ति बढ़ती है, यदि सरकार हस्तक्षेप भी नहीं करती है, तो भी कुछ शक्तियां पैदा हो जाती हैं जो ऐसी शक्ति की वृद्धि को रोकती हैं। अभी उस दिन मैं प्रो० गाले की अमरीकी पूंजीवाद पर एक पुस्तक पढ़ रहा था। यह एक दिलचस्प पुस्तक है। हो सकता है, कि जो कुछ वह कहता है, हम उस से सहमत न हों। परन्तु वह कहता है कि अमरीका में एक प्रतिक्रियात्मक शक्ति पैदा हो गई है, जो स्वल्पाधिकार अनेकाधिकार जैसी कुछ प्रवृत्तियों को रोकती है। वह सिद्ध करता है कि वे रोक वास्तविक हैं, काल्पनिक नहीं हैं। किन्तु उस सम्बन्ध में हमें पृथक ढंग से और बिल्कुल विभिन्न स्थान पर बरताव करना होगा। बहुत संभव है कि यह मामला ऐसा है, जो माननीय वित्त मंत्री से सम्बन्धित है। वह इस देश की राजकोषीय नीति और धन सम्बन्धी नीति का संचालन करते हैं। वह मुख्यतया ऐसे मार्गोपायों की तलाश में रहते हैं, जिन के द्वारा वह एकाधिकारों की वृद्धि को जो देश की अर्थ व्यवस्था के लिये घातक है, समाप्त कर सकें। औद्योगिक क्षेत्र में बचतों के संगठन और संचालन के लिये संस्थानीय पद्धतियों की आवश्यकता है और मैं समझता हूं कि इस प्रश्न की अन्य देशों में भी जहां लोग राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हैं, बिल्कुल अवहेलना नहीं की जा सकती है, जहां कुछ दल अवश्य यह अनुभव करते हैं कि मूल उद्योगों के राष्ट्रीयकरण की वृद्धि में ही भविष्य निहित है। मैं इंगलिस्तान जैसे देश की मज़दूर पार्टी का निर्देश करता हूं। बचत, आर्थिक प्रगति, मुद्रास्फीति और इसी प्रकार के विषयों पर मई १९५२ में मिनेसोटा के विश्वविद्यालय में हुए सम्मेलन में, ब्रिटिश श्रम सरकार के ऐक्सचेकर के भूतपूर्व चांसलर, श्री ह्यू गैटसकेल ने एक पर्चा प्रस्तुत किया था, जिसमें उन्होंने बहुत

सी समस्याओं का निर्देश किया था और जिन पर, इस चर्चा के सम्बन्ध में, सदन में कुछ मत अभिव्यक्त किये जा चुके हैं। यदि मुझे अनुमति दी जाये, तो मैं यह दर्शाने के लिये श्री गैटसकेल जैसे उद्योगों के राष्ट्रीयकरण के पक्षपाती व्यक्ति को भी व्यक्तिगत बचतों और विनियोजनों तथा उन बचतों को विनियोजनों के रूप में प्रयोग करने के लिये औद्योगिक समवायों के रूप में सोचना पड़ता है। मैं उन के भाषण से एक उद्धरण पढ़ कर सुनाना चाहता हूं। वह कहते हैं कि :

> "आंकड़ों सम्बन्धी मामलों के अतिरिक्त, बचत और आधुनिक सरकारी नीति से सम्बन्धित दो अन्य समस्याएं हैं, जिनका मैं वर्णन करना चाहता हूं। धनी लोगों द्वारा की जाने वाली व्यक्तिगत बचत की कमी, और निगम के लाभों पर बहुत भारी करारोपण, साधारण व्यापार को पहले की अपेक्षा बैंकों, बीमा कम्पनियों, और नई पूंजी खड़ी करने के लिये स्थापित दूसरी संस्थाओं पर और अधिक आश्रित बनाते हैं। इस का यह अभिप्राय नहीं है कि धन विनियोग के लिये पूंजी की कमी है। और अब तक इंगलिस्तान में इस का कोई वास्तविक चिन्ह नहीं है। हमारी मुख्य समस्या धन विनियोग के स्तर को रोकने की रही है—न कि विस्तृत करने की। किन्तु और अधिक ध्यान देने पर, कुछ यह विश्वास करते हैं कि जब तक पूंजी बाजार में कुछ परिवर्तन नहीं होते हैं, छोटे व्यापार के लिये फैलना बहुत कठिन है। इस का कारण यह है कि भूतकाल में धन विनियोग करने वालों ने नियम के रूप में, छोटे ऋण लेने वालों की बजाय बड़े ऋण लेने वालों का पक्ष लिया है। इसके अतिरिक्त अंश पूंजी के ऋण की मात्रा इतनी अधिक हो सकती है, जो 'गिरावट' के समय भयानक डर उत्पन्न कर दे।"

मैं चाहता हूं कि सदन इस वाक्य विशेष की ओर ध्यान दे।

> "नये प्रकार की श्रेणी संस्थाओं के विकास की आवश्यकता हो सकती है, जो कि छोटे और योग्य व्यापारियों को थोड़ा ऋण देने की बजाये धन विनियोजन के लिये उत्सुक हों। प्रतिद्वन्द्विता को जारी रखने के लिये, छोटे व्यापारियों को अधिक सुविधाजनक राजकोषीय सुविधायें दिये जाने के लिये, ऐसा भी मामला हो सकता है।"

[**सरदार हुक्म सिंह** पीठासीन हुए]

मैं ने यह अवतरण श्री टी० एन० सिंह को यह बताने के लिये उद्धृत किया है कि यह मानते हुए भी कि आप राष्ट्रीयकरण के पक्ष में हैं, जिसे आप मिश्रित अर्थ व्यवस्था कहते हैं, आप औद्योगिक क्षेत्र में आने वाले व्यक्तिगत बचत के तत्व बिना काम नहीं चला सकते हैं, क्योंकि क्षेत्र विस्तृत है, यदि यह इंगलिस्तान जैसी अर्थ व्यवस्था में विस्तृत है तो यह हमारे देश की अथ व्यवस्था में जहां विस्तार हमारा मुख्य उद्देश्य है, जहां तक भविष्य आर्थिक प्रगति का सम्बन्ध है यहां और अधिक विस्तृत है।

अब मैं एक या दो बातों को दोहराना चाहता हूं, जिनका माननीय वित्त मंत्री

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

द्वारा वर्णन किया गया था, जब कि उन्होंने इस विधेयक को प्रस्तुत किया था। इंगलिस्तान की कोहन समिति ने समवाय विधि पर अपने लिये जो प्रस्तावना रखी है, वह दोहराने योग्य है। कोहन समिति ने कहा है :

> "हमने सामान्य आर्थिक नीति के प्रश्न को जिस में एकाधिकार जैसे मामले सम्मिलित हैं, अपने निर्देश्य पदों से बाहर माना है।. हमारे विचार में, समवाय विधि को, विशिष्ट कार्यवाहियों की ओर ध्यान न देते हुए, समवायों से व्यवहार करना चाहिय, आर्थिक नीति के प्रश्न उस विषय की ओर आदेशित विधान द्वारा लिये जाने चाहियें और समवायों का नियंत्रण करने वाली सामान्य विधि से उन को पृथक् रखा जाना चाहिये ।"

मुझे यह कहते प्रसन्नता होती है कि समवाय विधि समिति ने स्वयं न्यूनाधिक वही उद्देश्य निर्धारित किया है; और मैं समझता हूं कि यह बड़ी बुद्धिमत्ता है कि उस ने ऐसा किया है । मैं ने कहा है, कि चाहे यह बजट के साधारण वाद विवाद के अवसर पर हो, या चाहे वाणिज्य तथा उद्योग विभागों पर होने वाली चर्चा के अवसर पर हो, या वित्त विधेयक पर होने वाली चर्चा के अवसर पर हो माननीय सदस्यों ' को निश्चय ही कुछ लोगों के हाथों में धन और शक्ति के केन्द्रीकरण के तथा इसे किस प्रकार रोका जाये, न प्रश्नों पर विचार करना चाहिये । समवाय विधि में जिसका आवश्यक आधार धन विनियोजन के प्रोत्साहन, धन विनियोजन के संरक्षण समवायों के ठीक तरह काम करने और उस प्रकार की सब बातों का प्रश्न है, उस की साधारण परिधि से कुछ भिन्न प्रकार के सामाजिक हेतुओं का आरोपण न तो बुद्धिमत्ता है और न ही वांछनीय है ।

मैं संक्षेप में इस उपक्रम विशेष के मूलभूत तत्वों का वर्णन करूंगा । स का प्रस्तावक द्वारा वर्णन किया गया था; मैं स्थिति का पुनः वर्णन करूंगा । उत्तम ढंग से अब उनको नौ श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं । मैं समझता हूं कि समवाय विधि समिति ने स्वयं इन को इन श्रेणियों में विभाजित किया है, अर्थात् विवरण पत्रिका तथा प्रवर्त्तन, प्रबन्ध पर हिस्सेदारों का नियंत्रण, अल्पसंख्यक हिस्सेदार तथा उनका संरक्षण, प्रबन्ध अभिकर्ता अर्थात संचालक तथा हिस्सेदार संचालकों की शक्तियां और कार्य, लेखा-परीक्षण, समाप्ति और उस प्रक्रिया में हिस्सेदारों और लेनदारों के अधिकार, निरीक्षण और अन्वेषण सम्बन्धी सरकार की शक्तियां और अन्त में समवाय विधि का प्रशासन । मैं निवेदन करता हूं कि प्रवर समिति को विशेष स्थितियों पर विचार करने एवं विभिन्न पहलुओं का परीक्षण करने के बारे में हिदायतें देने के लिये ठोस सुझाव रखने का बहुत विस्तृत क्षेत्र है । किन्तु मैं नम्रता-पूर्वक अपनी निराशा प्रकट करना चाहता हूं कि इस सदन में इन ठोस सिद्धान्तों पर इन बातों का विचार नहीं किया है । इस का यह अर्थ नहीं है कि ऐसे सदस्य नहीं हैं जिन्होंने इन विशेष पहलुओं का अभी अनुभव प्राप्त किया हो । कई बार इतिहास सहायक होता है और कभी कभी बाधक भी । इस मामले विशेष में आप देखेंगे कि जब हम समवाय विधि जैसे विषय पर वाद विवाद कर रहे हैं, तो हमारे सामने जो संदेह उत्पन्न उठ खड़े हुए थे, उन्हें दूर करने के लिये यह सहायक हुआ है । मैं ने १९३६–३७ में विधान सम्बन्धी कार्य का विवरण पुस्तकालय में उपलब्ध पुस्तकों में

पढ़ा है । मैं १९३६ में हुई समवाय विधि सम्बन्धी चर्चा का निर्देश कर रहा हूं । उन वाद विवादों को पढ़ने पर, मैं ने दो विभिन्न अवसरों पर दिये गये दो भाषण देखे, जो अब भी कुछ मान्यता रखते हैं । यह सच है कि उन दो सज्जनों द्वारा दिये गये भाषणों—प्रसन्नता की बात है कि उन में से एक अभी भी अपने साथ है, और दूसरा दुर्भाग्यवश, हमारे साथ नहीं है—में कुछ पक्षपात किया गया था, अर्थात् उन दिनों के विरोधी दल का पक्षपात उन में है जो सरकार के साथ मिलकर कुछ भी नहीं करना चाहता था । स्वर्गीय श्री भूलाभाई देसाई और श्री गोविन्द वल्लभ पन्त, वाद विवाद में इस तरह भार्ग नहीं ले सके थे, जिसे विशुद्ध नकारात्मक आलोचना कहा जा सकता है । मैं चाहता हूं कि प्रवर समिति के सदस्य उन दो भाषणों को पुनः पढ़ने का प्रयत्न करें । निश्चय ही उनका पढ़ना लाभदायक होगा ।

मैं यह जान कर प्रसन्न हूं कि इस विशिष्ट उपक्रम में, प्रवर्तकों ने या तो समिति की हिदायतों से या अन्यथा, श्री भूलाभाई देसाई द्वारा दिये बहुत से ठोस सुझावों को इस में सम्मिलित करना उचित समझा है । उनका समवाय विधि और बम्बई, अहमदाबाद तथा अन्य स्थानों में समवायों सम्बन्धी व्यवसाय का ज्ञान अद्वितीय था, और इसलिये, जो कुछ सुझाव उन्होंने रखे थे वे वास्तविकता पर आधारित थे । कोई भी व्यक्ति उनसे संतोष प्राप्त करता है—उन में से कुछ सुझाव इस विधेयक में जोड़ दिये गये हैं ।

श्री गोविन्द वल्लभ पन्त का एक सुझाव, जो १९३६ के विधेयक पर प्रवर समिति की रिपोर्ट पर विचार किये जाते समय दिया गया था, अभी भी कुछ संगत है, अर्थात अल्प संख्यक हिस्सेदारों की स्थिति के सम्बन्ध में उनके विचार आज भी मान्य हैं ।

उन्होंने यह सुझाव नहीं दिया था कि अनुपाती प्रतिनिधित्व के आधार पर संचालकों का निर्वाचन हो । मैं समझता हूं कि इस चीज़ पर समवाय विधि समिति ने भी विचार किया था और उसे उचित न समझकर छोड़ दिया था । परन्तु फिर भी इससे पता चलता है कि उन माननीय सदस्यों की विचारधारा क्या होती यदि उन्होंने अंशधारियों के हितों के बचाव और समवायों पर नियंत्रण रखने वाले व्यक्तियों से संबंधित जनता के हितों के प्रश्न पर विचार किया होता । मैं समझता हूं कि जहां तक हमारा संबंध है, आज भी इस विषय पर होने वाले विचार विमर्श पर इसका प्रभाव पड़ना चाहिये ।

श्री गोविन्द वल्लभ पन्त ने जो बचाव प्रस्तुत किये थे, वे कदाचित् एक दूसरे रूप में निगमित कर लिये गये थे । खण्ड ३६७ से ३६९ तक पर विचार करने से पता चलता है कि अल्पसंख्यक अंशधारी के लिये कुछ बचाव है, और इसके संबंध में मैं बाद में थोड़ा और कहूंगा ।

जैसा कि मैं ने कहा, मुख्य समस्या अंशधारी के बचाव का प्रश्न है । यह आसान नहीं है । मेरे माननीय मित्र, श्री रामस्वामी ने विवरण पत्रिका के संबंध में कहा; अन्य माननीय सदस्यों ने भी इस प्रश्न पर थोड़ा बहुत कहा । विवरण पत्रिकाओं के जारी करने के संबंध में हम जितनी भी शर्तें सोच सकते हैं, उन्हें हम बना सकते हैं और सभी सुसंगत व्यवहारों के प्रकटीकरण के लिये जोर दे सकते हैं, परन्तु क्या हम अनियमित सौदों के विरुद्ध कोई व्यवस्था कर सकते हैं ? समवाय

[श्री० टी० टी० कृष्णमाचारी]

प्रवर्तक के पास कोई विशेष सम्पत्ति हो सकती है; संभव है, उसने उसका मूल्य दिया हो, उससे उसे कोई लाभ न प्राप्त होता हो या केवल नाम मात्र का कमीशन मिलता हो । यह स्वयं बुरी चीज़ न ही है । परन्तु बाज़ार भाव गिर सकता है । इस प्रकार की बुराइयों के विरुद्ध अंशधारी के पास कोई बचाव नहीं है, और न ही गिरते हुए बाज़ार के विरुद्ध कोई बचाव हो सकता है । अतः अंशधारी उसको प्रवर्तक की मान प्रतिष्ठा के दृष्टिकोण से देखता है । यह सच है कि अंशधारी इस बात को देखता है कि प्रवर्तक की ख्याति कैसी है । कुछ ऐसे महत्वाकांक्षी व्यक्ति भी होते हैं, जो यह समझते हैं कि जहां पर उन्हें थोड़े जोखिम से शीघ्र ही धन प्राप्त हो सकता है, वहां पर पूंजी का लगाना अपेक्षित है । परन्तु जो सच्चे पूंजी लगाने वाले होते हैं, वे अपनी पूंजी केवल उन्हीं समवायों में लगाते हैं, जहां का प्रबन्धकर्ता अच्छी ख्याति वाला व्यक्ति होता है ।

प्रबन्ध अभिकर्ता के विरुद्ध जो कुछ भी कहा गया है, यदि वह बहुत हद तक सच भी हो तो भी यह नहीं कहा जा सकता कि उसका होना अनावश्यक है, और मैं समझता हूं, हम उसके अस्तित्व को मान्यता दे सकते हैं और उस पर गर्व कर सकते हैं । औद्योगिक संस्थाओं के बहुत से प्रबंधको ने बड़ी कुशलता से काम किया है, उन्होंने पूंजी आकर्षित की है, अपने अंशधारियों को उचित लाभांश दिये हैं, लोगों के दिलों में विश्वास पैदा किया है और अपनी संस्थाओं में और अधिक पूंजी लगाने के लिये लोगों को प्रोत्साहित किया है ।

अक्सर यह प्रश्न उठाया गया है कि पूंजी विनियोजन के संबंध में हमारे सामने एक बहुत ही रूखा सा चित्र है । अभी हाल ही में श्री एच० टी० पारिख ने बम्बई की पूंजी विनियोजन की अवस्था का अध्ययन किया था, और उन्होंने 'निगमों द्वारा की गई बचतों' की चर्चा की है । उनका कहना है कि १९५२ में अनुमानित निगम बचत लगभग ३४ करोड़ रुपये थी । वह कहते हैं कि भारत सरकार द्वारा प्रकाशित **निर्माण गणना** तथा पंचवर्षीय योजना से हिसाब लगाने पर समवायों द्वारा की गई वार्षिक अवक्षयण व्यवस्था २५ से ३० करोड़ रुपये आती है । कुल मिला कर निगम बचत ६० करोड़ रुपये है, जो कि एक वर्ष में उद्योग में लगाये गये हैं । विस्तार के दृष्टिकोण से विचार करते समय यह एक नगण्य बात नहीं है । देश की विशेष परिस्थितियों को देखते हुए, मैं समझता हूं कि ६० करोड़ रुपये की राशि बुरी नहीं है ।

मैं तो यह कहूंगा कि माननीय सदस्यों को यह पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये । यह एक बहुत अच्छी पुस्तक है । उसमें कहा गया है कि नये उपक्रमों की अपेक्षा जमी हुई संस्थाओं के लिये, जिनका उत्पादन और लाभों का लेखा संतोषजनक है, अपने ही अंशधारियों या जनता से नई पूंजी लगवाना आसान है । नये उपक्रमों में तो प्रवर्तकों को पहले लोगों में विश्वास उत्पन्न करना होता है ।

इन चीज़ों को आपको मानना है, और भविष्य में आंशिक रूप से निजी बचत तथा उपक्रमी प्रयत्न के द्वारा औद्योगिक विकास में लगाई गई किसी भी पूंजी की एकदम से उपेक्षा नहीं की जा सकती है । अंशधारियों की स्थिति के संबंध में प्रश्न उठता है अर्थात् क्या प्रबंधकों का अधिकांश शेयर लेना अंशधारियों के लिये या देश की अर्थ व्यवस्था के लिये लाभप्रद है । अक्सर हम यह कहते हैं कि यदि किसी समवाय

का प्रबन्ध बुरा है, तो वह इसलिये है क्योंकि प्रबन्ध अभिकर्ता का समवाय में कोई शेयर नहीं है और उसके हित सीमित हैं। इसके विपरीत कुछ ऐसी भी कम्पनियां हैं, जहां पर प्रबंध अभिकर्ता या नियंत्रकों या संचालकों के पास अधिकांश शेयर होते हैं, फिर भी कुछ हद तक अल्पसंख्यक अंशधारी की स्थिति बुरी होती है।

अंशधारी की रक्षा करते समय हमें यह ध्यान रखना है कि एक मतदाता की अपेक्षा अंशधारी अपने अधिकारों के प्रति कम जागरूक होता है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि लगभग ९५ प्रतिशत समवाय की बैठकों में अंशधारी भाग नहीं लेते हैं। अंशधारी को केवल अपने लाभांश की चिन्ता होती है। यदि लाभांश ठीक रहते हैं, तो वह आय व्यय विवरण पत्र की जांच भी नहीं करता है। हो सकता है कि सट्टेबाज़ इन बातों का ध्यान रखता हो, पर एक साधारण पूंजी विनियोजक इस सब के बारे में माथापच्ची नहीं करता है। उसको चिन्ता तभी होती है जब कि लाभांश में कमी होती है। अतः इस प्रकार के अंशधारी का बचाव करना बहुत कठिन काम है क्योंकि सब कुछ व्यवस्था करने के बाद भी अन्ततोगत्वा इस दिशा में सारा कार्य अंशधारियों को ही करना है, और आप उनसे वह काम नहीं करवा सकते, जो वह अपनी इच्छा से नहीं करना चाहते हैं।

अब प्रश्न प्रतिनिधिक मतों का आता है। मैं यह बता दूं कि सभी विनियमों का दुरुपयोग करने का यह एक सरलतम तरीक़ा है। इस संबंध में सुधार की काफी गुंजाइश है। परन्तु मैं इतना फिर कहूंगा कि आप ऐसा कोई भी विधान नहीं बना सकते हैं, जिसके द्वारा आप किसी एक ऐसे अंशधारी को अपने अधिकार का प्रयोग करने के लिये बाध्य कर सकें, जो उसका प्रयोग नहीं करना चाहता है।

यदि हम यह समझें कि प्रबंध अभिकर्ता या संचालक के हाथों में अधिक शेयरों का होना ठीक नहीं है, तो हम इसी समवाय विधि में शेयरों के वितरण का कोई ऐसा आधार निश्चित कर सकते हैं, जिससे कि किसी एक व्यक्ति के हाथ में अधिक शेयर न आ सकें। ऐसा रक्षित बैंक अधिनियम के संबंध में किया गया था। शेयरों के प्रादेशिक वितरण करने का भी विचार किया जा रहा है। फिर भी देखा यह जाता है कि परिस्थितिवश शेयर केन्द्रीभूत हो ही जाते हैं।

प्रवर समिति इस बात पर विचार कर सकती है कि क्या खण्ड ३६७—३६९ में पर्याप्त प्रत्याभूतियों की व्यवस्था है, क्या खण्ड २२७ में, जो कि सरकार को जांच के बाद मामले में हस्तक्षेप करने की अनुमति देता है, पर्याप्त प्रत्याभूतियों की व्यवस्था है। और यदि वह कोई अन्य आवश्यक प्रत्याभूतियों का सुझाव देती है, तो मुझे विश्वास है कि मेरे माननीय सहयोगी उन पर विचार करने के लिये तैयार हो जायेंगे। इस प्रकार से एकाधिकारी सटोरियों के, जो समवायों पर नियंत्रण रखते हैं, प्रभाव को कम किया जा सकता है।

अमरीका में इस तरह की समवाय विधि नहीं है। वहां एक सिक्योरिटीज़ तथा एक्सचेंज आयोग है। इस आयोग के एक पुराने प्रतिवेदन को, जो मेरे पास है, पढ़ने से यह पता चलता है कि एक पूंजीवादी देश भी शक्ति के केन्द्रीभूत होने के विरुद्ध निरंतर लड़ाई करता रहा है। उससे हमें उनके पूंजी नियोजक के बचाव के कुछ तरीकों का भी पता चलता है। हम उस पर विचार कर सकते हैं। परन्तु मैं समझता हूं कि इस प्रकार के पूंजी नियोजकों के

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

संबंध में हम समवाय विधि में कोई उपबंध नहीं बना सकते हैं । हमें कदाचित् दूसरी दिशाओं की ओर देखना होगा । संभव है, जब मेरे माननीय सहयोगी स्टॉक एक्सचेंज पर नियंत्रण करने का विचार करें तो, वह अमरीकी सिक्योरिटीज तथा एक्सचेंज आयोग के आधार पर योजना बनायें ।

अब मैं प्रबन्ध अभिकर्ता के प्रश्न पर आता हूं । व्यक्तिगत रूप से मैं इस पद्धति के पक्ष में कभी भी नहीं रहा हूं । परन्तु देश के औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए मैं यह समझता हूं कि इस पद्धति को एकदम समाप्त कर देने से हमें अत्यधिक क्षति होगी, जिसकी पूर्ति संभव नहीं है । यदि हम इस में सुधार करके इसे बनाये रखें तो इससे हमारे प्रयोजनों को सहायता मिलेगी । इस दृष्टि से मैं यह कह सकता हूं कि यह विदेशों की दासतापूर्ण नक़ल नहीं है । सरकार किसी देश की नक़ल करने का विचार नहीं रखती है । हमारे सामने तो देश की सेवा का महान उद्देश्य है । वैसे तो मानव स्वभाव ही अनुकरण करने का है । वह अनुकरण करके परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना लेता है और यही उसकी उत्कृष्टता है । आखिर मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यदि उसके पास धन है तो, वह उस समाज में विश्वास करता है अन्यथा नहीं । यदि वह अपने से अपेक्षाकृत धनी व्यक्ति को अपने धन का प्रदर्शन करते देखता है तो वह समझता है कि वह व्यक्ति भूल पर है । यह माननीय प्रवृत्ति है । किन्तु सरकार के नाते हम ऐसा नहीं सोच सकते हैं । आशा है माननीय मित्र श्री साधन गुप्त अपने उल्लेख के लिए मुझे क्षमा करेंगे । हालांकि उनका भाषण अच्छा तो नहीं था किन्तु मुझे अच्छी तरह याद है । मुझे प्रसन्नता है कि श्री साधन गुप्त ने उन बंगाली सज्जन का अनुकरण किया है जिन्होंने १८ वर्ष पूर्व यहां भाषण दिया था और अपने भाषण में उन मद्रासी सज्जन का उल्लेख किया था जिन्होंने औद्योगिक संगठन के बारे में सुसंगत बातें कही थीं । उन दिनों हम आश्चर्य में पड़ गये थे कि डा० लोकनाथन सरीखे अपेक्षाकृत अख्यातिप्राप्त अर्थशास्त्री की "औद्योगिक संगठन" के बारे में लिखी पुस्तक का उल्लेख लोक सभा में किया गया है । प्रबन्ध अभिकर्ता बहुत से तथ्यों को इकट्ठा करके उत्पादन यंत्र के रूप में जो काम करता है उसके सम्बन्ध में जो बातें उस पुस्तक में कही गई हैं वे आज भी सुसंगत हैं ।

इसका इतिहास बताने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है और न कोई इसे जानना ही चाहता है । हालांकि समवाय विधि समिति के प्रतिवेदन की टिप्पणी में लिखा है कि दूसरे देशों में विकास दूसरी तरह के हैं । प्रतिवेदन के पृष्ठ ८३ में यह टिप्पणी दी हुई है । यह सत्य है कि हमारे देश में विस्तार की जो प्रणाली है उसके अन्तर्गत विकास तो हो रहा है किन्तु उत्थान नहीं हो रहा है । अमरीका सरीखे देश में समुदाय निगम एक उत्थान सम्बन्धी संगठन है । यह सर्वथा सत्य नहीं है कि बहुत से ब्रिटिश एकाधिकारी सार्थों में उत्थान विषयक बातें पाई जाती हैं । दोनों ही प्रकार की बातें होती हैं कभी उत्थान विषयक बातें पाई जाती हैं तो कभी विस्तार विषयक । माननीय सदस्य जो विदेशी आर्थिक समीक्षा वाले समाचारपत्रों में रुचि रखते हैं उन्होंने अभी हाल में देखा होगा कि इंगलैण्ड की वह सब से बड़ी संयुक्त संस्था जिसका उत्पादन गतवर्ष १३१०० लाख पौण्ड का था उत्थान एवं विस्तार वाली संस्था है ।

यह सत्य है कि उत्थान सम्बन्धी विकास कुछ अंशों में अवांछनीय विकास नहीं है। उदाहरण के लिये—वे कपड़ा मिलें जिनकी कुछ पूंजी, कपड़ा मिलों की मशीनें बनाने में, कपड़ा मिलों में काम आने वाले रंगों के बनाने में लगी हो। किन्तु यह विकास तो विस्तारमय है। बहुत से माननीय सदस्यों ने समवायों के नाम गिनाये हैं। हमें तो इस बात पर विचार करना है कि क्या इस प्रकार के विस्तारमय विकास से भागीदारों का कुछ अंशों में अहित हुआ है, तथा क्या कुछ सामाजिक उद्देश्यों के, जिनको कि हम रखना चाहते थे, विरुद्ध इस विकास ने कुछ कार्य किया है। मेरा विश्वास है कि प्रबन्ध अभिकरण के बारे में खंड ३०७ से लेकर सम्पूर्ण परिच्छेद में इस तथ्य के बारे में चर्चा की गई है तथा एक समवाय द्वारा दूसरे समवाय के शेयर लिये जाने का प्रश्न, तथा एक समवाय के धन के दूसरे समवाय में लगाये जाने आदि प्रश्नों की भी चर्चा की गई है। यह हो सकता है कि बचाव सम्बन्धी उपबन्ध पर्याप्त नहीं हैं। यदि वे पर्याप्त नहीं हैं तो प्रवर समिति का यह कर्तव्य है कि वह इस बात पर विचार करे कि किस प्रकार इनको पर्याप्त बनाया जा सकता है। यह भी हो सकता है कि यदि प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली के बारे में बोलने के बजाय माननीय सदस्यों ने खंडों को अच्छी तरह पढ़ा होता तो उन्हें इस बात का पता लग गया होता कि कुछ संभावित असंगतियां हैं। उनका उल्लेख करने का मेरा विचार नहीं है। मेरा निवेदन है कि इस सम्बन्ध में कुछ प्रयत्न किया जाना चाहिये।

चिरायिन्किल के माननीय सदस्य ने श्री सरोज बसु की पुस्तक का उल्लेख किया है। श्री बसु ने भारतवर्ष में प्रबन्ध अभिकर्ता को वित्त-पोषक बताया है।

इस देश में उद्योग व्यापार तथा वाणिज्य के विकास एवं उन्नति में कुछ विशिष्ट बातें काम करती हैं। हमारा तो कहना यह है कि इस समय उनके स्थान पर हमें कुछ बदलना नहीं है। हो सकता है कि डा० लंका सुन्दरम् यह कहें कि यह तो अयोग्यता स्वीकार करना है। किन्तु मैं कहूंगा यह तो समय की आवश्यकताओं को स्वीकार करना है। आज समय की प्रधान आवश्यकता यह है कि विस्तार होना चाहिये, आजीविका देने के अधिक अवसर होने चाहियें, राष्ट्रीय सम्पत्ति का जो कि अधिक आजीविका देने के लिए एक मात्र साधन है, विकास होना चाहिये, उसी के द्वारा अधिक से अधिक व्यक्तियों को लाभ पहुंचाया जा सकता है तथा कल्याणकारी राज्य के प्रति अधिक से अधिक न्याय किया जा सकता है। जब हम यह स्वीकार करते हैं कि प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली में कुछ दोष हैं—और कोई भी प्रणाली जो लाभप्राप्ति की आकांक्षा वाले समाज पर आधारित है, दोष अवश्य होंगे अतः प्रतिरोध एवं बचाव की व्यवस्था करनी है,—तो हम औद्योगिक ढांचे को तथा समाज को प्रबन्ध अभिकरण प्रणाली के बिना नहीं बना सकते हैं। यह हो सकता है कि यह विकास जो निरंतर हो रहा है, कोई दूसरा रूप ले ले।

चिरायिन्किल के माननीय सदस्य ने यूरोप के समवायों के सम्बन्ध में उस दिन बोलते हुए कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया था। मैं यह तो नहीं कहूंगा कि जो कुछ भी उन्होंने कहा था वह बिल्कुल अप्रशंसनीय था, उसमें कुछ तो संभवतः प्रशंसनीय था। वहां छोटे पदों से उन्नति करके बड़े पद पाने वाले व्यक्ति को प्रबन्धक संचालक बनाने की प्रथा है—एक व्यक्ति जो छोटे छोटे पदों से उन्नति करके पांच वर्ष तक प्रबन्धक संचालक का कार्य करता है उसे

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

पांच वर्ष की समाप्ति पर अपना कार्यकाल समाप्त कर देना होता है। चाहे वह कितना ही नवयुवक, तथा उपयोगी ही क्यों न हो उसे अपने स्थान से हटना होता है। कुछ समवायों में ऐसी परम्परा है। इस प्रकार की प्रथा हमारे यहां पारिवारिक सार्थों में जिनका अधिकतर भारतीय प्रबन्ध अभिकरणों द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है, नहीं है। हो सकता है कि उनमें से कुछ सार्थ भविष्य में उस परम्परा को अपना लें।

हो सकता है कि पारिवारिक प्रबन्ध अभिकरण समय के प्रवाह के साथ साथ उसी प्रकार हट जायं जिस प्रकार कि श्री गेटसकेल ने वर्णन किया है। औद्योगिक व्यवस्था में पारिवारिक प्रबन्ध अभिकरण के विकास तथा अभ्युदय की संभावना को सम्पदाशुल्क निश्चय ही दूर करता है। सम्पदाशुल्क के कारण इंगलैण्ड में ग़ैर सरकारी समवाय नाशोन्मुख हैं। समय आने पर, जैसे जैसे सम्पदाशुल्क हमारे यहां क्रियान्वित होता जायेगा एवं व्यक्तियों की मृत्यु होती जायेगी, उन प्रबन्ध अभिकरणों की, जो कि पारिवारिक सार्थ हैं, स्थिति में परिवर्तन होता जायेगा। अभिकरणों में छोटे छोटे पदों से उन्नति करके प्रबन्ध संचालक होने की परम्परा का श्री गणेश हो सकता है। यह तत्व ऐसा होगा जिसकी कुछ अवधि होगी, जो व्यक्ति छोटे छोटे पदों से उन्नति करके इस पद तक पहुंचेगा, उस में प्रविधिक एवं प्रबन्ध सम्बन्धी योग्यता होगी, और जन्म के कारण योग्यता रखने की बात को कोई मान्यता नहीं दी जायगी। यह विकास यथासमय ही होगा। हम इसकी कल्पना नहीं कर सकते हैं। यदि ऐसा हो जाये कि हम प्रबन्ध संचालक पद्धति को अधिक से अधिक अपनाने लगें और प्रबन्ध अभिकरणों को, जहां तक संभव हो, छोड़ते जायें तो फिर सरकार यह तो नहीं कहेगी कि "नहीं, प्रबन्ध अभिकरण पद्धति हमेशा चलती रहेगी"। हमें प्रबन्ध अभिकर्त्ताओं से कोई विशेष दिलचस्पी नहीं। हमें तो यह एक लाभप्रद पद्धति मालूम होती है और इसीलिये हम इसका अनुसरण कर रहे हैं। हमारे पास कोई अन्य विकल्प नहीं है, हमें इसकी जगह कोई दूसरी पद्धति दिखाई नहीं देती। हो सकता है कि इसमें खराबियां हों, परन्तु जब हमारे पास कोई चारा ही नहीं है, जब इसके स्थान पर कोई दूसरी पद्धति है ही नहीं, तो फिर इससे ही काम करना होगा। यदि हम इस पद्धति के अनुसार भी काम नहीं करेंगे तो फिर हम अपने समाज का पुनर्निर्माण किस प्रकार करेंगे और किस तरह हमारा समाज उन्नति करेगा। हम यही सब करने के लिये वाग्बद्ध हैं और हम अपनी ज़िम्मेदारियों से केवल इस कारण दूर भागना नहीं चाहते, कि कोई हम से यह कहता है कि आप जिस पद्धति का अनुसरण कर रहे हैं वह खराब है। जब तक हमारे पास कोई विकल्प नहीं है तब तक हमें इसी का अनुसरण करना होगा।

संभव है कि कुछ इस प्रकार के प्रबन्ध अभिकर्त्ता हों जिनसे बचने के लिये हमने यहां खंड ३१० आदि में आवश्यक उपबन्ध न किये हों। माननीय सदस्य खड़े होकर यह पूछ सकते हैं कि अमुक प्रबन्ध अभिकरण समवाय में केवल एक हज़ार रुपये की पूंजी लगी हुई है, तो फिर इस मन्दी के ज़माने में रुपया प्राप्त करने के लिये वह क्या तरीके अपना रहा है, तो मैं उनको यही उत्तर दूंगा कि मैं आपकी बात पूरी तरह मानने के लिये तैयार हूं। हमें अवश्य ऐसी कुछ व्यवस्था करनी चाहिये ताकि प्रबन्ध अभिकरण समवाय के पास पूंजी हो सके, संचालकों को कुछ संसाधन उपलब्ध हों जिससे कम

से कम प्रबन्ध अभिकर्त्ताओं की चालबाज़ियों से तो बचा जा सके। उनके जो तरीक़े होते हैं उन्हें मैं आपको पहले भी बता चुका हूं कि भारत में स्थित ब्रिटिश लोग कर से बचते रहते हैं। संभव है कि ऐसी ब्रिटिश व्यापारिक संस्थायें हों जिनके प्रबन्ध अभिकरण समवाय ५०० रुपये की पूंजी से काम कर रहे हों। आयकर अधिनियम की धारा २३(क) के उपबन्धों के अधीन समवाय चलता रहता है। उसकी आय का चालीस प्रतिशत भाग रक्षित निधि में डलता रहता है और फिर एक दिन समवाय को समाप्त कर दिया जाता है और उसकी जगह एक नया समवाय स्थापित हो जाता है। मैं मानता हूं कि ये इसकी बुराइयां हैं। इस प्रकार के प्रबन्ध अभिकरणों पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाना चाहिये। जो माननीय सदस्य इस विषय में जानकारी रखते हों उन्हें चाहिये कि प्रवर समिति को सारी बातें बतायें और विधेयक में ऐसा उपबन्ध करायें जिससे प्रबन्ध अभिकरण समवाय वास्तविक रूप से पूंजी की व्यवस्था कर सकें।

प्रबन्ध अभिकरण के समर्थन में मैं यही तर्क आपके सामने रखना चाहता हूं और मैं फिर से यह कहता हूं कि जब तक हमारे पास कोई दूसरा रास्ता नहीं होगा तब तक हमें वर्त्तमान पद्धति से ही काम करना होगा; यह जरूर है कि उसकी बुराइयों की ओर से हम सावधान रहेंगे। यदि सामने बैठे सदस्य इन बुराइयों को दूर करने के लिये कुछ उपाय बता सकते हैं तो मैं आशा करता हूं कि मेरे माननीय मित्र, वित्त मंत्री महोदय समय आने पर उन पर विचार करेंगे और ऐसी प्रणाली अपनायेंगे जिससे शक्ति का केन्द्रीकरण और दुरुपयोग न हो। परन्तु यदि आप यह कहते हैं कि हम में मूल सिद्धान्तों पर मतभेद है तो फिर मैं यही कहूंगा कि रहने दीजिए, इस मतभेद को चलने दीजिये।

मैं एक या दो बातों पर और बोलना चाहता हूं। विधेयक में विदेशी समवायों के संबंध में कुछ खंड हैं। मैं प्रवर समिति से कहूंगा कि वह इन उपबन्धों में सुधार करने के प्रश्न पर सोच-विचार करें। मैं ने भी इस विषय पर काफी विचार किया है; मुझे विश्वास है मेरे माननीय कार्यबन्धु प्रवर समिति के सदस्यों की इस विषय में राय मालूम करेंगे। शायद यह समिति इन उपबन्धों को और कड़ा बनाने में सफल हो जाये। इस सदन में, वाद विवाद एवं प्रश्नों के समय मैं पहले बता चुका हूं कि बीमा कम्पनियों, बैंकिंग समवायों और औद्योगिक फ़र्मों को एक लाइसेंस लेना पड़ता है, परन्तु हमारे यहां बाहर कहीं संस्थापित विदेशी कम्पनियों या भागीदार समवायों को, जो यहां आ कर अपना धंधा शुरू करते हैं, लाइसेंस देने की कोई व्यवस्था नहीं है। पुराने अधिनियम के अन्तर्गत कुछ ऐसे उपबन्ध हैं जिनके अनुसार इन कम्पनियों को अपने हिसाब-किताब के कुछ विवरण देने होते हैं। हम इसी में कुछ और उपबन्ध कर सकते हैं। हम समझते हैं कि प्रवर समिति इन सब बातों पर विचार करेगी।

श्री चटर्जी ने संविहित प्राधिकार के विषय में चर्चा की। इस मामले में मेरे कुछ निजी विचार हैं। कुछ वर्ष पहले शायद भारत शासन अधिनियम, १९३५ में एक फ़ेडरेल रेलवे प्राधिकार को स्थापित करने के बारे में कुछ उपबन्ध था। हो सकता है इसे फिर से लाया जाये। वर्त्तमान परिस्थिति में, जब हमारे यहां संसदीय शासन-व्यवस्था है जिसमें यह सदन अपने हाथ में अधिक से अधिक अधिकार लेना चाहता है, फ़ेडरेल रेलवे प्राधिकार अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। परन्तु इससे आपका नियंत्रण अवश्य कम हो जायेगा। रेलवे को, जिसका दिन पर दिन विस्तार

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

हो रहा है, इससे कुछ स्वतंत्रता मिल जायेगी। हो सकता है कि फेडरेल रेलवे प्राधिकार आवश्यक न हो, परन्तु रेलवे व्यवस्था के कुछ भाग अलग निगम का रूप धारण कर सकते हैं। उदाहरण के तौर पर एक ऐसी वर्कशाप लीजिये जहां बहुत ज़रूरी सामान बनता हो और जिसमें काफ़ी पूंजी लगी हुई है और जो विभागीय आधार पर चलाया जा रहा हो। मान लीजिये कि उसकी कोई मशीन, जिसका मूल्य ३०,००० रुपये हो, टूट जाती है। यदि मैं उस वर्कशाप का मैनेजर हूं और वह सरकार से पृथक प्राधिकार हो तो मैं कलकत्ता या बम्बई जा कर पता लगाऊंगा कि ऐसी मशीन या ऐसा पुर्ज़ा कहां बन सकता है और दो हफ्ते के अन्दर में अपना काम करवा लूंगा। यदि रेलवे प्राधिकार की तरह यह कोई सरकारी विभाग होता, तो क्या होता ? एक आवेदन-पत्र संभरण विभाग को जाता, फिर वह टेन्डर मंगाता और जो सबसे कम दाम का टेन्डर होता उसे मंजूर किया जाता वरना इसके लिये जवाब देना पड़ता। इस तरह बहुत सा समय लगता और तब तक मशीन बेकार पड़ी रहती। इस हालत में आप कोई औद्योगिक कम्पनी नहीं चला सकते। आम तौर से, जिस प्रकार के प्राधिकार का सुझाव दिया गया है उसके लिये कुछ स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है। यह सोचने से कोई लाभ नहीं कि सरकार को कुछ अधिकारों से वंचित करके प्राधिकार स्थापित किया जाये। एक बार प्राधिकार स्थापित हो जाये, फिर श्री बंसल कहने लगेंगे "प्राधिकार का रहना ठीक है। सरकार से अधिकार ले लिये जायें।"

श्री बंसल (झज्जर-रिवाड़ी) : मैं ऐसा नहीं कहूंगा।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मुझे खुशी है। मैं अपनी ग़लती सुधारता हूं और आपसे क्षमा मांगता हूं। एक वकील एक दम से यह कह देगा कि सरकार अकुशल और अयोग्य है। हो सकता है कि सरकार अयोग्य हो। मैं श्री चटर्जी के इस विचार से सहमत हूं कि हमें एक आर्थिक असैनिक सेना की आवश्यकता है जिसमें व्यापार-धंधों को चलाने के लिये प्रशिक्षित लोग हों। वाणिज्य तथा उद्योग मंत्री की हैसियत से, मैं यह अनुभव करता हूं कि चूंकि मेरे पास ऐसे व्यक्ति नहीं हैं जो जल्दी काम करने के महत्व को समझते हों, इसलिये मुझे बड़ी कठिनाई होती है। हमें इसके लिये शीघ्र ही कुछ करना है। कुछ दिन हुए एक माननीय सदस्य ने—शायद श्री पांडे ने कहा था कि एक पत्र लिख कर आय-कर की ३ लाख रुपये की रक़म वापस कर दी गई थी।

श्री सी० डी० पांडे (ज़िला नैनीताल व ज़िला अल्मोड़ा—दक्षिण पश्चिम व ज़िला बरेली—उत्तर) : यह अभी नहीं दी गई है।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : उन्होंने फिर यह पूछा कि क्या आयात लाइसेंस दिये गये थे। मैं कहता हूं कि हां, दिये गये थे। लाइसेंस पत्र लिखने पर दिये जा रहे हैं बशर्ते कि पत्र उचित तथा अपेक्षित प्रकार से लिखे गये हों। बम्बई में ऐसा होता है। वहां लाइन प्रणाली है और एक लाइन में १२ लोग होते हैं जो आवेदन पत्र आने के २४ घंटे में लाइसेंस देने की व्यवस्था करते हैं। मैं यह नहीं कहता कि सरकार के काम में कोई कमी या गलती नहीं है। मैं ऐसा कोई दावा नहीं करता परन्तु हमें इसी आधार पर शासन को चलाना है। कोई नई प्रणाली

चालू करके तीन महीने तक उसके काम को देख कर फिर उसे छोड़ देने से तो कोई लाभ नहीं । मेरे पास ऐसे उदाहरण हैं । इस लिये मैं श्री चटर्जी की बात को मानता हूं कि हमें एक ऐसी आर्थिक सेवा चाहिये जिसमें व्यापार धंधों का अनुभव रखने वाले और जल्दी किसी फैसले पर पहुंचने वाले व्यक्ति हों। मैं यह नहीं कहता कि इस में कोई खराबी है । नये समवाय विधि प्राधिकार के चाहे जो अधिकार हों और चाहे जो कृत्य हों, परन्तु इसमें ऐसे व्यक्ति होने चाहियें जिन्हें वाणिज्य-व्यापार का अनुभव हो, जो अपना काम होशियारी से पूरा कर सकें और साथ ही जो छोटी छोटी बातों को अपने काम के सिलसिले में रुकावट न बनने दें । जब संतुलन पत्र में किसी ग़लती के बारे में शिकायत की जाये तो यह कह देने से कोई फायदा नहीं होगा कि छपने में भूल रह गई है ; इस पर मुक़दमे की तरह नियमित रूप से छानबीन होनी चाहिये । हमें बड़े बड़े काम करने हैं और उतनी ही सावधानी से करने हैं । यही हमारा दृष्टिकोण होना चाहिये । परन्तु यह चीज संविहित प्राधिकार की स्थापना से नहीं हो सकती । आज कल की परिस्थिति में सरकार से अलग रह कर कोई प्राधिकार शीघ्रता से कार्य नहीं कर सकता । इसे शीघ्रता से ही कार्य करना होगा । अगर आप कहें कि अमुक प्रबन्ध अभिकरण ने ग़लत तरीके से काम किया है और झूठा संतुलन पत्र बनाया है और अमुक प्रबन्ध अभिकर्ता ने अमुक व्यक्ति को किसी कार्य विशेष के लिये नियुक्त किया है अगर आप मेरे कार्य बन्धु से इन बातों का उत्तर मांगें तो वह कह सकते हैं कि "ये कार्य प्राधिकार द्वारा किये जाते हैं ।" हमें कुछ समय तक इस समवाय विधि विधेयक की बारीकियों को समझना होगा । इसमें बहुत सी बातें रखी गई हैं और प्रवर समिति द्वारा और बहुत सी रखी जायेंगी । हमको और अधिक अनुभव प्राप्त करना है । इस लिये मेरी राय म इस समय प्राधिकार से नुकसान ही नहीं होगा बल्कि यह खतरनाक भी होगा । अन्ततः संसद् ही इस बात का फ़ैसला करेगी कि इस प्रकार का प्राधिकार लाभप्रद होगा या नहीं । संसद् के नियंत्रण के अतिरिक्त जो न्यायिक अधिकार स्थापित किये जाते हैं उनकी स्थिति शासनान्तरे शासन जैसी ही होती है । यह एक बिल्कुल अलग मामला है । परन्तु, इस प्रकार के प्राधिकार की स्थापना पर विचार करने का यह समय नहीं है ।

मैं समझता हूं कि मैंने सदन का काफी समय ले लिया है । मेरा इतना अधिक बोलने का इरादा नहीं था । मैं इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूं, परन्तु मैं इस लिये बोलना चाहता था क्योंकि वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय का इस समवाय विधि से घनिष्ठ सम्बन्ध है । सरकार का उद्देश्य यह है कि विभिन्न रूप से प्रयत्न करके हम अपने देश का विकास करें जो हमारा अन्तिम लक्ष्य है ।

अंत में मैं एक निवेदन और करूंगा । विगत काल में प्रवर समितियों का एक पुराना एवं अनुभवी सदस्य होने के नाते मैं प्रवर समिति के सदस्यों को एक सुझाव देना चाहता हूं । हमें यह कार्य जल्दी करना है, इसलिये प्रवर समिति को दो या तीन छोटी छोटी समितियों में बांट दिया जाय जो प्रबन्ध अभिकरण पद्धति, अंशधारियों के हित और निरीक्षण आदि विभिन्न विषयों पर अलग अलग विचार करें । दो या तीन उप-समितियां इसे जल्दी कर सकती हैं और हमारा काम बहुत शीघ्र पूरा हो सकता है ।

मेरे माननीय मित्र, श्री चटर्जी, ने कहा था कि प्रारूपण का स्तर गिर गया है । ठीक है, लोकतन्त्रीकरण का अर्थ ही उच्च स्तरों का गिर जाना होता है । आखिरकार, हम इन विधेयकों में एक विदेशी भाषा का

[श्री टी० टी० कृष्णमाचारी]

प्रयोग कर रहे हैं। यद्यपि हमें अभी तक कोई ऐसी भाषा नहीं मिली है जो इसका स्थान ले सके, परन्तु फिर भी हम इससे छुटकारा पाने का प्रयत्न कर रहे हैं। अतः यह सर्वथा संभव है कि हमें हिचकिचाहट के कारण दोनों में से किसी का भी ज्ञान प्राप्त न हो। कदाचित कुछ निम्न कोटि का प्रारूपण हुआ है। परन्तु मैं अपने साथी की ओर से जो मेरे दाईं अंग बैठे हैं, यह कहना चाहता हूं कि केवल तीन प्रारूपकारों के साथ, जिन्हें सदन में प्रति वर्ष सैकड़ों विधेयक प्रस्तुत करने होते हैं, उच्च कोटि का प्रारूपण होना संभव नहीं है। प्रारूपण का अर्थ है वास्त्रशास्त्री की भांति शांतिपूर्वक बैठना तथा पत्थर या लकड़ी की मूर्ति का रूप व आकृति बनाना, या धातु के पात्र पर कुछ खोदना, जिसके लिये शांत वातावरण का होना आवश्यक है, और कभी कभी प्रारूप में एक वाक्य रखने के लिये देर तक गम्भीरतापूर्ण विचार करना पड़ता है। केवल तीन प्रारूपकारों के होते हुये सैकड़ों विधेयक प्रस्तुत करना कठिन है। यह संसद् के अधिकार में है कि कुछ और प्रारूपकारों की मांग करे। तो भी, प्रवर समिति कुछ प्रारूपणकार्य कर सकती है। जब हम संविधान सभा के सदस्य थे, तो हमने कुछ प्रारूपण किया था। मुझे इस में कुछ संदेह नहीं है कि प्रवर समिति में जो लोग प्रारूपण में रुचि रखते हैं उनमें से कुछ इस बात का ध्यान रखेंगे। मुझे विश्वास है कि प्रवर समिति एक ऐसा प्रतिवेदन प्रस्तुत करेगी जो इस देश के भविष्य के लिये बड़ा सहायक सिद्ध होगा। मैं सदन से प्रस्ताव की सिफारिश करता हूं।

श्री मात्तन (तिरुवल्ला) : यह एक ऐसा प्रलेख है जिस पर सावधानीपूर्ण विचार किया गया है तथा जो विस्तृत रूप में बनाया गया है। यह विधेयक उसकी अपेक्षा, जिसका यह निस्सारण करेगा, योजना तथा रचना में अधिक युक्तियुक्त है, तथा सामान्यजन के लिये अधिक समझने के योग्य है। समवाय विधि समिति ने बहुत अच्छा कार्य किया है। उन्होंने देश भर में भ्रमण किया है। सामान्यतः प्रभावित होने वाले समस्त हितों पर सावधानी से विचार किया है तथा सारी राज्य सरकारों से परामर्श किया है। इस के अतिरिक्त इस विधेयक से सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न हितों का समर्थन प्राप्त करने के लिये विस्तृत कार्यवाही की है। ऐसी स्थिति में, मैं समझता हूं कि उस संशोधन का कोई औचित्य नहीं है जो विधेयक का परिचालन चाहता है। मैं इसका विरोध करता हूं।

मुझे यह देख कर प्रसन्नता हुई है कि विधेयक में, प्रबंधक-अभिकरण तथा संचालकों के भ्रष्टाचार तथा दुरोपयोग के समस्त सामान्य साधनों की समाप्ति तथा सामान्य विनिमयकर्ता के हित की रक्षा का बड़ा ध्यान रखा गया है परन्तु मुझे डर है कि प्रस्तावित विधेयक के कुछ उपबन्ध ऐसे हैं जो जोखिम उठाने में अगवाई करने तथा अधिक पूंजी लगा कर व्यापार स्थापित करने के लिये नागरिकों के साहस को दबायेंगे तथा विफल बनायेंगे। संचालक पद के लिये अधिकतम आयु सीमा रखने की कोई आवश्यकता नहीं। कठोर दण्डों के अनेक उपबन्ध भी कम किये जाने चाहियें।

पूंजी, लेखापरीक्षण आदि के सम्बन्ध में जो परिवर्तन किये गये ह, मैं उन्हें पसन्द करता हूं। यह वास्तव में ही महत्वपूर्ण बात है कि नया विधेयक केवल साधारण पूंजी तथा अधिमान-पूंजी को मान्यता देता है। मैं यह पसन्द करता हूं। मैं माननीय वित्त मंत्री का ध्यान एक तीसरे प्रकार की पूंजी

की ओर आकर्षित करूंगा । मैं समझता हूं कि उन्हें कुल पूंजी के भाग-अंश, जिसकी सिफारिश इंगलिस्तान की एक समिति ने हाल में की है, जारी करने के औचित्य पर विचार करना चाहिये ।

मैं अति अधिक विवाद ग्रसित विषय पर आ रहा हूं । अर्थात् प्रबन्धक अभिकरण प्रणाली पर । प्रबन्धक अभिकर्ता के दोषों को दूर करने के लिये वर्तमान विधेयक में ५२ खंड हैं । परन्तु, जैसा कि सदन को विदित है, यह प्रबन्धक अभिकरण प्रणाली अंग्रेजों ने अपने विदेशी व्यापार का प्रबन्ध करने के लिये जारी की थी । कुछ स्काच समवायों का व्यापार अब मेरे सगे भाई ने संभाल लिया है । यह बात मैं यहां प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करता हूं कि स्काटलैण्ड की प्रबन्धक अभिकरण फर्मों ने मेरे या मेरे भाई की अपेक्षा कहीं उत्तम ढंग से काम चलाया था । यदि भारतीय प्रबन्ध अभिकरणों ने प्रबन्धकार्य -स्काटलैंड की फर्मों की अपेक्षा आधी कुशलता तथा सच्चाई से किया होता, तो मैं इस प्रणाली का विरोध न करता ।

गत महायुद्ध के पश्चात् भारत भर में, प्रबंधक अभिकरण प्रणाली के अन्तर्गत, समवायों की स्थापना हुई । उस समय प्रबन्धक अभिकरणों की स्थापना प्रबन्ध को कुशल बनाने के लिये नहीं अपितु कुछ परिवारों में स्थायी बनाने के लिये की गई थी । यदि हमारी भारतीय प्रबन्धक फर्में कार्यकुशलता में स्काटलैंड की प्रबन्धक अभिकरण फर्मों के बराबर आने या उनसे आगे बढ़ने का सच्चा प्रयत्न करेंगी और ख्याति प्राप्त करेंगी, तो यह एक लाभदायक प्रस्ताव होगा । इस सम्बन्ध में मेरे मित्र श्री टामस ने आशा प्रकट की थी कि वित्त मंत्री इस विधेयक में सरकारी क्षेत्र के विषय पर भी एक अध्याय सम्मिलित करेंगे । जैसा कि मेरे मित्र श्री पांडे ने संकेत किया था, सरकारी क्षेत्र या इसका अधिकतर भाग हमारी आशाओं के अनुसार सिद्ध नहीं हुआ है । सरकारी क्षेत्र का जिसे निजी क्षेत्र के अस्त होते सूर्य के विरुद्ध चढ़ता हुआ सूर्य समझा गया था, उत्तरदायित्व है कि वह अपना कार्य सचाई तथा कुशलता से करे ।

मैं माननीय वित्त मंत्री को दो सुझाव देना चाहता हूं एक तो यह है कि सरकारी क्षेत्र के समस्त उद्योग एक मंत्री के अधीन हों । मैं इस बात के विरुद्ध हूं कि 'हिन्दुस्तान एयरक्राफ्ट' रक्षा मंत्रालय के अधीन है या 'टेलीफोन्स' संचार मंत्रालय के अधीन है । परन्तु मेरा कहना यह है कि ये सब उत्पादन मंत्रालय के अन्तर्गत होने चाहियें । क्योंकि यदि समस्त निर्माणशालाओं को एक मंत्रालय के अन्तर्गत रखा जाये तो उन्हे अधिक समान व्यवहार प्राप्त होगा । दूसरा सुझाव सरकारी क्षेत्र की निर्माणशालाओं के प्रबन्धक अभिकर्ता के बदलने के बारे में है । मेरा सुझाव है कि प्रबन्धक अभिकर्ता की कार्य-अवधि किसी भी निर्माणशाला में कम से कम पांच वर्ष हो, और इसके साथ उसे बढ़ाने की भी व्यवस्था होनी चाहिये । इसके अतिरिक्त, उसके अधीन एक और व्यक्ति काम करने वाला हो, जो उसका स्थान ले सके । यदि प्रबन्धक अभिकर्ता परिस्थिति के अनुकूल कार्य न कर सके तो यह बड़े ही खेद की बात होगी । यदि वे उस प्रशंसा के पात्र नहीं हैं जो मैंने स्काटलैंड की प्रबन्धक अभिकरण फर्मों की थी, तथा यदि वे उस स्तर तक नहीं आते हैं, तो देश में सरकारी क्षेत्र के विकास के लिये यह एक खेदजनक बात होगी ।

इन शब्दों के साथ मैं प्रस्ताव का समर्थन करता हूं ।

श्री कृष्ण चन्द्र (ज़िला मथुरा–पश्चिम) : माननीय सभापति जी इस सदन में कल से इस बिल की बहस के दौरान में मैनेजिंग एजेंसी की प्रथा बहस की एक बहुत बड़ी वस्तु बन गई है और कितने ही माननीय सदस्यों ने इस प्रथा की प्रशंसा में अपनी सारी योग्यता खर्च की है और इसकी काफी डट कर वकालत की गई है ।

एक माननीय सदस्य ने, जो मेरे ही प्रांत, उत्तर प्रदेश, के हैं, इस प्रथा की गाथा गाते हुये यहां तक कह डाला कि बैंकों और इंश्योरेंस कम्पनीज़ में मैनेजिंग एजेंसी का सिस्टम नहीं है इस लिये इन संस्थाओं का प्रबन्ध बहुत खर्चीला है और इसमें बहुत खर्च होता है ।

श्री सी० डी० पांडे : यह जो आप को भ्रम हो गया है वह मैं जरा दूर कर देना चाहता हूं । मैंने कहा है कि मैनेजिंग एजेंसी को बदल देने से और उसकी जगह मैनेजिंग डायरेक्टर कर देने से खर्चा कम नहीं हो सकता है और बेईमानी कम नहीं हो सकती है । मैनेजिंग डाइरेक्टर भी जिस तरह से चाहते हैं और जो उनके हाथ में होगा खर्च करते हैं . . .

श्री कृष्ण चन्द्र : वही मैं कह रहा हूं, उनका ख्याल है कि मैनेजिंग एजेंसी कम खर्चीली प्रथा है और प्रबन्ध का यह जो तरीका है वह कम खर्चीला है . . .

श्री सी० डी० पांडे : मेरा मतलब यह नहीं है ।

श्री कृष्ण चन्द्र : यही तो मतलब है कि मैनेजिंग एजेंसी में खर्च कम होता है । मुझे अच्छी तरह से याद है कि उन्होंने कहा था कि कितनी ही कम्पनियों का मैनेजिंग एजेंट एक हो सकता है और इस तरह से खर्च में किफायत हो सकती है । उन्होंने यहां तक भी कह डाला है कि हमने जिन उद्योगों का राष्ट्रीयकरण किया है, उनमें खर्चा बहुत बढ़ा चढ़ा है ।

माननीय सभापति जी, व्यवसाय के संचालन का अगर महज यही दृष्टिकोण है कि उसके प्रबन्ध में खर्चा कम हो, हमारा देश खूब समद्धिशाली हो तथा उसका व्यवसाय खूब फले फूले, तो इस बात को माना जा सकता है कि चन्द पूंजीपतियों को, जिन्होंने अपने व्यवसाय में अब तक काफी योग्यता दिखायी है, यानी ऐसे १५, २०, २५, ३० व्यक्तियों को, चुन लिया जाय और उन्हीं को इस देश के सारे साधन सुपुर्द कर दिये जाय ताकि वे उन साधनों का इस्तेमाल करके व्यवसाय की तरक्की करें, यहां के उद्योग धंधों को और इस देश की दौलत को बढ़ावें । मुमकिन है कि इस तरीके से देश की समृद्धि ज्यादा जल्दी बढ़ सके । लेकिन क्या इससे देश का कोई कल्याण होगा ? महज़ देश के उद्योग, व्यवसाय और उसकी समृद्धि को बढ़ाना हमारा लक्ष्य नहीं है । हमारा लक्ष्य तो यह होना चाहिये कि इस देश के लाखों, करोड़ों नर नारियों का सुख और कल्याण हो, उनको पैसा मिले, उनको रोजगार मिले और वे सुखी रहें । अगर यह हमारा उद्देश्य है, तो वह इस से पूरा नहीं हो सकता । यदि चन्द एक पूंजीपतियों के हाथ में धन दौलत इकट्ठी करदी जाय, तो उससे हमारा यह उद्देश्य पूरा नहीं होने वाला है । अगर इतना ही उद्देश्य हो, तो फिर यहीं के पूंजीपतियों तक ही क्यों सीमित रहा जाय ? उसके वास्ते तो सारा संसार पड़ा हुआ है, दुनियां में से अच्छे चुनींदा, अनुभवी और सुयोग्य आदमियों को—जहां वे मिलें—चुन-लीजिये ऐसे लोगों को जिन्होंने व्यवसाय के अन्दर काफी अनुभव प्राप्त किया है और अपनी योग्यता दिखलाई है । उनके हाथ में इस देश के व्यवसाय को सुपुर्द

कर दिया जाय। ऐसे बहुत से पूंजीपति आज हमको मिलेंगे। अगर हम बाहर के पूंजीपति लेंगे तो हमारे लिये पूंजी की समस्या भी नहीं रहेगी ; पूंजी भी वे अपनी ले आयेंगे और जल्दी से इस देश के व्यवसाय को तरक्की दे देंगे। लेकिन मैं कहना चाहता हूं कि इन बातों से हमारा लक्ष्य पूरा नहीं होगा। मेरे मित्र का जो दृष्टिकोण है वह बहुत संकुचित है। महज व्यवसाय की तरक्की या महज देश के धन दौलत की तरक्की एक संकुचित दृष्टिकोण है। उनका दृष्टिकोण यह नहीं है कि इस देश के रहने वालों का और यहां की जनता का कल्याण हो। उनकी राय में तो सरकारी नियंत्रण व्यवसाय के लिये बड़ा घातक है। उन्होंने तो यहां तक कह डाला कि व्यवसाय के क्षेत्र में सरकार का जरा सा भी कंट्रोल, थोड़ा सा भी प्रतिबन्ध, नहीं रहना चाहिये क्योंकि सरकारी अफसरों की काली छाया उस व्यवसाय के उज्जवल वस्त्र को खराब कर देती है, उसके संचालन में रुकावट डालती है और उसको आगे नहीं चलने देती। अगर उनकी बात मान ली जाय और उनके कहे अनुसार आगे चला जाय तो चूंकि यह मैनेजिंग एजेंसी का सिस्टम भारी दक्षता रखता है इस लिये फिर क्यों नहीं देश की हकूमत की बागडोर भी उनके सुपुर्द कर दी जाय। लोकल बाडीज़, स्टेट्स और सेन्टर का सारा एडमिनिस्ट्रेशन मैनेजिंग एजेंसी के सिस्टम पर शुरू कर दिया जाय और उनको पूरा अधिकार दे दिया जाय ताकि वे अपनी कार्य दक्षता अच्छी तरह दिखला सकें। सभापति जी मेरा ख्याल है कि इस तरह की बातें कहना अपने असली दृष्टिकोण से विचलित होना है। आज जो मैनेजिंग एजेंसी सिस्टम है. चारों तरफ से इस बात की मांग है, सरकार ने भी, सरकार की तरफ से भी जो भाषण अभी हमारे माननीय इंडस्ट्रीज़ और कामर्स मिनिस्टर का हुआ है और माननीय फाइनेंस मिनिस्टर ने जो अपना प्रारम्भिक भाषण दिया है उसमें उन्होंने भी इस बात को स्वीकार किया है और दूसरी तरफ से जो इस सदन के सुयोग्य सदस्य डाक्टर चटर्जी जो इस प्रथा की वकालत करते हुये बोले हैं उन्होने भी इस बात को स्वीकार किया है कि यह हमारी प्रथा बहुत खराब हो गई है, ऐसे इसमें खाऊ पीर पैदा हो गये हैं जो अनेक प्रकार से बेईमानी करके और अपना मैनीपुलेशन करके अपना स्वार्थ साधन करते हैं और रोजगार को धक्का लगाते हैं।

चारों तरफ से यह भी कहा गया है कि अभी इस मैनेजिंग ऐजेंसी सिस्टम को रखना होगा। लेकिन अगर यह एक नेसेसरी ईविल है तो इस पर ऐसे प्रतिबन्ध लगा दिये जायें, इस पर ऐसे चैक्स लगाये जायें कि इसका जो दूषित रूप है, वह बहुत कम हो सके। इसी ख्याल से हमारे इस कानून में, हमारे इस बिल में, जो कि हमारे सामने पेश है, चेक लगाने की कोशिश की गई है। आज हम देखते हैं--और यह बात निस्सन्देह सत्य है-- कि आज जो बहुत से व्यवसाय और कल कारखाने चलते हैं वे इन कम्पनियों के द्वारा चल रहे हैं। और जहां तक मुझे ख्याल है यहां पर श्री साधन चन्द्र गुप्त ने यह बात कही थी कि यह जो कम्पनियों की प्रथा है यह एक तरह से हमारे राष्ट्रीयकरण का प्रारम्भिक रूप थी, छोटा रूप थी। कम्पनियों के द्वारा हमने यह कोशिश की थी, इस बात का इन्तजाम करने की चेष्टा की थी कि देश के छोटे बड़े सभी लोग अपने वित्त को अपनी हैसियत के अनुसार देश के व्यवसाय में लगाकर उस के साझीदार बन सकें। जितना जिसके पास है वह उतना उस में लगा सके, और, सभापति जी शुरू शुरू में जब कम्पनियां हमारे देश में चालू हुईं और उनका जोर बढ़ा तब हमने देखा कि काफी छोटे लोग नई कम्पनियों में अपने शेयर खरीदते थे, और अपनी बचत

[श्री कृष्ण चन्द्र]

का रुपया लगाते थे। कम्पनियों की तरफ से भी जो प्रमोटर्स होते थे वे इस बात की काफी कोशिश करते थे कि जहांतक हो सके वे आम लोगों तक जितना पहुंच सकें, उतने लोगों तक पहुंच कर वे शेयर का रुपया इकट्ठा करें। उन पर लोगों का विश्वास भी था, लेकिन जब मैनेजिंग एजेंसी के सिस्टम का खराब रूप हमारे सामने आया, उस में दोष आये और उन्होंने लोगों के विश्वास का दुरुपयोग किया, तो इसका नतीजा यह हुआ कि लोगों का विश्वास उन के ऊपर से उठ गया। आज हम देखते हैं कि, जैसा कि यहां भी कहा गया है, हमको इस बात की सख्त जरूरत है कि लोगों के पास जहां भी थोड़ी बहुत पूंजी है, उस पूंजी को बटोर कर उससे कम्पनियों के द्वारा व्यवसाय चालू किये जायें। इस के लिये कोई न कोई एजेंसी हमारे पास होनी चाहिये। हमारे माननीय कामर्स और इंडस्ट्री मिनिस्टर ने भी यह कहा था कि ऐसी एजेंसी होनी चाहिये और वह एजेंसी मैनेजिंग एजेंसी के सिस्टम पर ही हो सकती है। प्रमोटर्स जो होते हैं वह इसी उम्मीद पर होते हैं कि आगे चल कर उनको मैनेजिंग एजेंसी का अधिकार मिल जायेगा। जब वे कोई कम्पनी चालू करते हैं तो उसमें वे अपनी मैनेजिंग एजेंसी की नींव भी रख देते हैं और उसका एग्रीमेंट भी दाखिल कर देते हैं। तो इस उम्मीद से, अपने स्वार्थ साधन की दृष्टि से वे कोशिश करते थे कि पूंजी इकट्ठी करें। लेकिन हम देखते हैं कि कम्पनियों का जो रूप आज हमारे सामने आ रहा है, उससे जो हमारा असली मकसद इन कम्पनियों के द्वारा था कि इस से देश के छोटे और बड़े तथा देश के असंख्य लोगों को रोजगार और व्यवसाय में शामिल किया जाय, वह आज इन कम्पनियों के द्वारा पूरा नहीं हो रहा है। आज हम देखते हैं कि जितनी कम्पनियां बनती हैं उनको देश के बड़े इन्डस्ट्रियलिस्टस ही चला रहे हैं। आप मोदी को ले लीजिये, सिंघानिया को ले लीजिये, जितने दक्ष पूंजीपति कहलाते हैं वही लोग कम्पनियां चला रहे हैं। आज हम यह भी देख रहे हैं कि जहां एक पूंजीपति का व्यवसाय कामयाब हुआ, सफल हुआ; उसका रोजगार बढ़ा, उसमें नफा आना शुरू हुआ, उस की प्रख्याति हुई, वह अपने आस पास कई और कम्पनियां खड़ी कर लेता है। चूंकि हमारे देश की व्यवस्था के अन्दर व्यवसाय के लाइसेंस देने में, व्यवसाय की इजाजत देने में, या नये उद्योग धंधों की इजाजत देने में पब्लिक कम्पनी को ज्यादा तरजीह दी जाती है, प्राइवेट कम्पनी को तरजीह नहीं दी जाती, इसलिये जो हमारे पूंजीपति हैं, व्यवसायी हैं, मिल मालिक हैं, उनको मजबूर होकर रोजगार को कम्पनी का रूप देना पड़ता है ताकि रोजगार को चलाने के लिये इजाज़त मिल जाये। इस ख्याल से वे ऐसा रूप नहीं देते हैं कि उनको आम लोगों तक पहुंचने की जरूरत है और आम लोगों से रुपया इकट्ठा करने की आवश्यकता है। उनको जल्दी इजाज़त मिल जाये, इस ख्याल से वे कम्पनियां बनाते हैं। आज हम दूसरे दर्जे तक बढ़ गये हैं। आज कम्पनियों को हमने मजबूत कर दिया है, उनकी जड़ को मजबूत कर दिया है, कम्पनियों की प्रथा हमारे देश में जड़ पकड़ गई है और कम्पनियों के लिये शेअर कैपिटल इकट्ठा करने में कोई ज्यादा दिक्कत नहीं रही है, क्योंकि कैपिटलिस्ट लोग आपस में ही अपना शेयर कैपिटल इकट्ठा कर लेते हैं। आज यह बात नहीं है कि कम्पनियों को व्यवसाय में घाटा होता है। यह सही है कि जो व्यवसाय ऐसे हैं, जैसे कि बेसिक इंडस्ट्रीज, जिनमें मुनाफे की गुंजायश

कम है, जिन में कि लोगों को अपनी इंटरप्राइज़ को उठाने की ज़रूरत है, जिनमें जोखिम उठाने की जरूरत है, जो व्यवसाय ऐसे हैं जिनसे देश की वाकई तरक्की हो सकती है, वाकई उन्नति हो सकती है, उन में हम देखते हैं कि पूंजीपति नहीं आते हैं, बल्कि जो व्यवसाय ऐसे हैं जो आसान हैं, जो चल चुके हैं और जिन में उनको पूरी तवक्को और पूरी उम्मीद है कि उसमें नफा काफी मिलेगा यानी कन्ज़ूमर्स गुडस की जो इंडस्ट्री है, उनमें वे अपनी पूंजी आसानी से लगाते हैं ।

मेरा सब से पहला सुझाव यह है कि हम जितनी भी रियायतें मैनेजिंग एजेन्ट्स या मैनेजिंग डायरेक्टर्स को दें उन में इस बात का ख्याल रखें कि जो मैनेजिंग एजेंट्स ऐसे व्यवसाय को चलाने वाले हैं जिसमें कि जोखिम है और जो व्यवसाय देश के लिये बहुत जरूरी हैं, बेसिक इंडस्ट्रीज हैं, उन में मैनेजिंग एजेंट्स को काफी रियायत दे दी जाय । जितनी रियायतें दे सकें हम दें । मगर जो कन्ज़ूमर्स गुड्स की इंडस्ट्रीज हैं उनके मैनेजिंग एजेंट्स को ज्यादा रियायत देने की जरूरत नहीं है । आप उनके रास्ते में कोई भी रुकावट डालें वे कम्पनियां जरुर बनेंगी और उनके मैनेजिंग एजेंट्स समाने आयेंगे । उन के लिये तो आप को यह जरूरत है कि उन के रास्ते में आप इस किसम के पूरे चेक लगा दें ताकि शेयर होल्डर्स का रुपया सुरक्षित रहे । आज हम यह देखते हैं कि शेयर होल्डर्स और मैनेजिंग एजेंट्स के बीच में अगर कोई शेयरहोल्डर्स की रक्षा करने वाला है तो वह बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स है । शेयरहोल्डर्स की मीटिंग्स भी होती हैं, लेकिन माननीय इंडस्ट्री और कामर्स मिनिस्टर खुद इस बात को अपने भाषण में स्वीकार कर चुके हैं कि जहांतक उन्होंने अध्ययन किया है, शेयरहोल्डर्स में से कोई इन्टरेस्ट नहीं रखता है । शेयरहोल्डर्स तो मीटिंग्स में पहुंचते तक भी नहीं और इस वास्ते उनका चेक एक प्रकार से बेकार सा चेक है । अगर मैनेजिंग एजेंट्स की खराबियों को रोकने के लिये कोई चेक हो सकता है तो वह चेक डायरेक्टर्स का ही हो सकता है । लेकिन इस बिल में मैनेजिंग एजेंट्स को यह अधिकार भी दिया गया है कि एक तिहाई डाइरेक्टर्स को वे स्वयं मुकर्रर कर सकते हैं और जब चाहें तब उन को बरखास्त भी कर सकते हैं, उनकी जगह दूसरे डाइरेक्टर्स मुकर्रर कर सकते हैं । मैं पूछता हूं कि आप उनको यह अधिकार क्यों देते हैं ? अगर इस अधिकार की जरूरत भी है तो सब इंडस्ट्रीज को इस बात का अधिकार देने की जरूरत नहीं है । जो लोग आज मैनेजिंग एजेंसी सिस्टम चला रहे हैं, जो लोग मुनाफे वाले रोजगार कर रहे हैं उनके रास्ते में तो आप को चेक ही लगाना चाहिये । आप को यह करना चाहिये कि जितने डाइरेक्टर हों उनमें से एक को भी मननीत करने का अधिकार मैनेजिंग एजेंट्स को न होना चाहिये ।

मैनेजिंग एजेंट्स का उनका किसी तरह का रिश्ता नहीं होना चाहिये । डाइरेक्टर्स ऐसे होने चाहियें जो एक तरह से निष्पक्ष रूप से, मैनेजिंग एजेंट्स की कोई रियायत किये बिना, शेअरहोल्डर्स के हितों की रक्षा कर सकें, उस दृष्टिकोण से सारे मामलात पर विचार और गौर कर सकें, ऐसे डाइरेक्टर्स होने चाहियें, और ऐसे डाइरेक्टर्स तभी हो सकते हैं जब हम यह शर्त हटा लें कि मैनेजिंग एजेंट्स को डाइरेक्टर्स मुकर्रर करने का अधिकार हो ।

दूसरी बात डाइरेक्टर्स के सम्बन्ध में इस कानून में यह रखी गई है कि दो तिहाई डाइरेक्टर जो होंगे वही रोटेशन से रिटायर होंगे और एक तिहाई जो डाइरेक्टर्स होंगे

[श्री कृष्ण चन्द्र]

वे परमानेन्ट हो सकते हैं। हो सकता है कि किसी इंडस्ट्री में गवर्नमेंट के ख्याल से यह जरूरी हो, और जैसा कि मैंने निवेदन किया बेसिक इंडस्ट्रीज में इसकी जरूरत हो सकती है, लेकिन आप इस बिल के अन्दर यह रियायत सब इंडस्ट्रीज को क्यों दे रहे हैं। सारे डाइरेक्टर्स को बाई रोटेशन रिटायर होना चाहिये और अगर किसी इंडस्ट्री में आप समझते हैं कि इसकी जरूरत है तो गवर्नमेंट अपने हाथ में यह अधिकार ले कि जिन इंडस्ट्रीज के लिये गवर्नमेंट विचार करने के बाद यह समझेगी कि एक तिहाई डाइरेक्टर्स को मुस्तकिल कर दिया जाय तो वहां पर गवर्नमेंट ऐसा अधिकार दे देगी। यह मेरा दूसरा सुझाव है।

तीसरी बात यह है कि जैसा कि मैंने अर्ज किया, कि इस कानून के अनुसार डायरेक्टर्स ही शेयरहोल्डर्स के हितों की रक्षा कर सकते हैं, इस पोजीशन को हमें मजबूत करना है। आपको ऐसे डाइरेक्टर्स बनाने चाहियें जो निस्स्वार्थ भाव से, निष्पक्ष भाव से मामलों पर विचार कर सकें। डाइरेक्टर्स को यह अधिकार दिया गया है कि वे कम्पनी की इजाजत से अपना परसनल इन्ट्रैस्ट भी रख सकते हैं। अब कम्पनी की इजाजत का जहां तक सवाल है, जैसा कि माननीय कमर्स और इंडस्ट्रीज मिनिस्टर साहब ने भी मंजूर किया है कि शेयरहोल्डर्स मीटिंग्स में कोई दिलचस्पी नहीं लेते, वे मीटिंग्स बेकार होती हैं, यह चैक बेकार है। इसके अलावा डाइरैक्टर्स बेसिक पदों पर ऐसे आदमियों को रख सकते हैं जो उनके रिश्तेदार हों, उनके बिल्कुल निकट सम्बन्धी हों। जब आप डाइरेक्टर्स को इस तरह से अपना स्वार्थ साधन का मौका देंगे तो हमारे इस बिल का जो खास मकसद है कि डायरेक्टर्स मैनेजिंग एजेंट्स और शेयरहोल्डर्स के बीच में आयेंगे और वह मैनेजिंग एजेंट्स से शेयरहोल्डर्स के हितों की रक्षा करेंगे, वह खत्म हो जायेगा, और जब आप डाइरेक्टर्स को इस तरह स्वार्थ साधन का मौका देंगे तो वे भी अपना स्वार्थ साधन करने में लग जायेंगे। हम देखते हैं कि जितनी भी संस्थायें हम कायम करते हैं, चाहे वे स्टेट्यूटरी हों, या नान स्टेट्यूटरी हों, सब में हम यह नियम रखते हैं कि जो भी उसके सदस्य होंगे वे कोई आफिस आफ प्राफिट नहीं होल्ड कर सकते, परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से भी। हमारी इस पालियामेंट में भी, जहां कि हम पांच साल के लिये चुन कर आते हैं, हमने यह नियम रखा है कि कोई सदस्य आफिस आफ प्राफिट होल्ड नहीं कर सकता। जब यहां के लिये यह नियम है तो व्यापारिक संस्थाओं के लिये तो यह नियम और भी ज्यादा कड़ा होना चाहिये। बिल में से इस व्यवस्था को हटा देना चाहिये कि डाइरेक्टर्स चाहें तो अपने रिश्तेदारों को रख सकते हैं, क्योंकि इस से वह अपना स्वार्थ साधन करने लग जायेंगे। मैं यह समझ सकता हूं कि कहीं कहीं इस की जरूरत हो सकती है। व्यवसाय की दृष्टि से यह जरूरी हो सकता है। ऐसी हालत के लिये यह रखा जा सकता है कि अगर किसी व्यवसाय में इस तरह की जरूरत हो तो गवर्नमेंट के प्रीवियस एप्रोवल से ऐसा करने दिया जायेगा। अगर गवर्नमेंट को यह ऐतबार हो कि डाइरेक्टर्स पर विश्वास किया जा सकता है और वह ईमानदार है तो ऐसी खास हालत में ही वह गवर्नमेंट की स्वीकृति से ऐसा कर सकेंगे। लेकिन कम्पनी की इजाजत से वह अपना स्वार्थ साधन कर सके यह चीज नहीं होनी चाहिये।

इस बिल में एक चीज और रखी गई है कि कम्पनी की इजाजत से डाइरेक्टर

निजी कर्जा भी कम्पनी से ले सकते हैं । इसमें भी मेरा वही दृष्टिकोण है और वही दृष्टिकोण होना चाहिये । यह भी एक स्वार्थ साधन का तरीका है । इसकी भी इजाजत गवर्नमेंट से ही होनी चाहिये । कम्पनी का रेज्यूलेशन तो कोई चेक नहीं है । मंत्री महोदय इस बात को स्वीकार कर चुके हैं । तो आप इस बनावटी चेक को क्यों रखना चाहते हैं । या तो आप उनको पूरा अधिकार दे दीजिये नहीं तो कारगर चेक रखिये । यहां भी यही रखना चाहिये कि जहां गवर्नमेंट कोई खास जरूरत समझे वहां यह इजाजत दे सकती है कि किसी खास डाइरेक्टर को कर्ज दिया जाय । डाइरेक्टर को अधिकार क्यों दिये जाते हैं और उनके लिये बहुत सी सहूलियतें रखने की क्यों जरूरत है ? इस वास्ते कि व्यवसाय में रुकावट न पड़े, इंतजाम में कोई झंझट न पड़े, इंतजाम सहूलियत के साथ चलता रहे । इसी वास्ते इन रियायतों की जरूरत है । कोई माननीय सदस्य यह नहीं कह सकता कि हम इन रियायतों को इस लिये रख रहे हैं ताकि इनके द्वारा कुछ आदमियों को अपना स्वार्थ साधन करने का मौका दिया जा सके । जो अब तक इस सदन में कहा गया है उसकी यही मंशा है कि कम्पनी के काम की सहूलियत के वास्ते ही यह रियायतें डाइरेक्टर्स को और मैनेजिंग एजेंट्स को देनी चाहियें । मैं यह पूछता हूं, कि सभापति महोदय, कि अगर डाइरेक्टर्स को निजी लोन न दिया जाय तो इस से कम्पनी का क्या खास काम रुक जायेगा । मैं नहीं समझ सकता कि कम्पनी के काम में क्या रुकावट इस से पड़ जायेगी । साधारण तौर पर तो कोई रुकावट पड़ेगी नहीं कम्पनी के काम से और डाइरेक्टर के परसनल लोन से तो प्रत्यक्ष रूप में कोई सम्बन्ध नहीं दिखाई देता । लेकिन अगर कहीं कोई सम्बन्ध हो भी तो उसके लिये इस बिल में यह रखा जा सकता है कि इसके लिये गवर्नमेंट से इजाजत ली जाय, लेकिन यह खुला अधिकार कम्पनी को नहीं देना चाहिये । जैसा मैंने पहले अर्ज किया मैं फिर अर्ज करूंगा कि कम्पनी बिल में अब हमको इस बात का लिहाज रखना होगा कि कम्पनियों के विकास की दूसरी मंजिल इस देश में पहुंच चुकी है । हमें अपने लक्ष्य को अपने सामने रखना चाहिये । वह लक्ष्य हमारा यही है कि कम्पनियों का जो तौर तरीका हो, वह एक तरह से राष्ट्रीयकरण का छोटा रूप हो और जहां हम राष्ट्रीयकरण नहीं कर सकते हैं वहां हम यह संतोष कर सकें कि इस कम्पनी ला के द्वारा हम ज्यादा से ज्यादा लोगों को उस व्यवसाय में शामिल कर सकते हैं, अगर इसके लिये हमको कोई रियायत देनी पड़े तो हमको देनी चाहिये । जहां हम यह देखें कि रियायत के बगैर डाइरेक्टर काम नहीं कर सकते और इंडस्ट्री नहीं चल सकती वहां हमको रियायत देनी चाहिये, ताकि काम में रुकावट न पड़े । अभी सब तरफ से यह तसलीम किया गया है कि मैनेजिंग एजेंसी सिस्टम एक नैसेसरी ईविल है और इन्तजाम के ख्याल से, व्यवसाय को चालू रखने के ख्याल से, व्यवसाय में आसानी हो इस ख्याल से, और व्यवसाय के संचालन में रुकावट न पड़े, इस ख्याल से, हमें इसको अभी रखने की जरूरत है । जब हमको इस बात की जरूरत है तो हमको मैनेजिंग एजेंट्स को उतनी ही रियायतें देनी चाहिये कि जितनी रियायतों के दिये बिना हम समझते हैं कि व्यवसाय में रुकावट पड़ सकती है । इस के अलावा और रियायतें हमको नहीं देनी चाहियें । इस बिल में यह सही है कि यह कोशिश की गई है कि पहले से रियायतों में कमी की जाय और खास तौर से डाइरेक्टर्स की रियायतों में कमी की गई है । लेकिन मैं सिलेक्ट कमेटी के सामने यह रखना चाहता

[श्री कृष्ण चन्द्र]

हूं कि रियायतें दी गई हैं वे अब भी बहुत ज्यादा हैं और जो लक्ष्य सामने रखा गया है उसको देखते हुये उन सब रियायतों को रखने की कतई जरूरत नहीं है । डाइरेक्टर्स के लिये तो कुछ सख्ती भी की गई है । डायरेक्टर्स के लिये यह रखा गया है कि दो कम्पनियों से ज्यादा का कोई मैनेजिंग डायरेक्टर नहीं हो सकता, पांच साल से ज्यादा कोई मैनेजिंग डायरेक्टर नहीं रह सकता, पांच परसेंट से ज्यादा अपने लिये नहीं ले सकता । इन शर्तों का मैनेजिंग एजेंट्स की शर्तों से मुकाबला कीजिये । मैनेजिंग एजेंट्स के लिये आपने यह रियायत रखी है कि वह २०, २५, या ३० कम्पनियों का मैनेजिंग एजेंट हो सकता है । एक तरफ तो यह रियायत रखी गई है और दूसरी तरफ रेम्यूनरेशन में भी काफी रियायत रखी गई है । मैं पूछता हूं कि एक कम्पनी कायम हुई और उस कम्पनी में कोई मुनाफा नहीं हो रहा है । तब क्यों मैनेजिंग एजेंट्स को अपने लिये उस कम्पनी के कोष से भारी रकम लेने की छूट रहे ।

मैनेजिंग एजेंट्स को मुकर्रर करने का हमारा लक्ष्य यही है कि वे लोगों से रुपये को जुटायें और व्यवसाय का संगठन करके ठीक से इन्तज़ाम करें और उस व्यवसाय को ऐसे सुचारू रूप से चालू करें ताकि आम शेयर-होल्डर्स को उनके शेयर्स का मुनाफा मिल सके, लेकिन शेयर होल्डर्स को कोई मुनाफा न मिले तब भी मैनेजिंग एजेंट्स अपने रिम्युनरेशन के, इस बिल में, हकदार हैं । इसमें रक्खा गया है कि चाहे कोई प्राफिट कम्पनी को हो या न हो लेकिन मैनेजिंग एजेंट्स को नामिनल रिम्युनरेशन ज़रूर मिलेगा और नामिनल रिम्युनरेशन उन्होंने ५० हज़ार रुपये तक रक्खा है । अब सभापति जी आप ज़रा विचार करें कि यहां रोज़ इस सदन में हम इस बात पर ज़ोर देते हैं कि आमदनियों पर रोक लगायी जानी चाहिये, और कोई एक सीलिंग मुकर्रर कर देनी चाहिये जिससे कि ज्यादा किसी की आमदनी न हो, सरकारी नौकरों की तनख्वाहों पर भी रोक लगाये जाने की मांग की जाती है, ऐसे समय में मैनेजिंग एजेंट्स की जो यह पचास हज़ार रुपये देने का प्राविज़न है, वह कहां तक तर्कसंगत और उचित है ?

श्री आल्तेकर (उत्तर-सतारा) : यह मैक्सिमम है ।

श्री कृष्ण चन्द्र : मैक्सिमम नहीं है, मिनिमम है, आप इसको मिनिमम मैक्सिमम कह सकते हैं । मैक्सिमम इस वास्ते नहीं है कि अगर किसी कम्पनी में प्राफिट नहीं है तो ज्यादा से ज्यादा मैनेजिंग एजेंट इतना ले सकता है । आपने यह अधिकार जहां दे दिया तो इसमें कहां इस बात की रुकावट है कि यह मैक्सिमम आम तौर पर नहीं होगा । आपने तो यह खुली छूट दे दी है और इसके अनुसार मैनेजिंग एजेंट्स पचास हज़ार रुपये तक बिना किसी मुनाफे के हुए, चाहे रोज़गार चला हो या न चला हो, चाहे उसमें नुकसान हुआ हो और चाहे इन्तज़ाम में ख़राबी रही हो, मैनेजिंग एजेंट्स पचास हज़ार रुपये तक लेने के हकदार होंगे । जब आप यह कहते हैं कि हम नियंत्रण रक्खेंगे और गवर्नमेंट ने इस बिल का जो गठन किया है उसकी जो रूपरेखा बताई है उसमें यह रक्खा गया है कि हमारी फाइनेंस मिनिस्ट्री के अन्दर इस काम की देख रेख करने के लिये एकोनामिक अफेयर्स डिपार्टमेंट में काबिल आदमी रक्खे जायेंगे जो कम्पनियों का नियंत्रण करेंगे इसके होते हुए मैं नहीं समझता कि आप इतनी खुली छूट कानून में क्यों दे रहे हैं ? आप पचास हज़ार रुपया मत रखिये बल्कि आप पांच हज़ार से पन्द्रह हज़ार तक या पचास हज़ार तक भी रख लीजिये, पांच हज़ार से

पचास हज़ार रख लीजिये, ज्यादा से ज्यादा अगर रखना ही चाहते हैं लेकिन इस बिल में यह अधिकार गवर्नमेंट को दे दीजिये कि वह यह देख कर कि कौन व्यवसाय कैसा चल रहा है, वह व्यवसाय देश के लिये ज़रूरी है अथवा नहीं अथवा अमुक व्यवसाय जोखिम वाला है या नहीं, इसको देखते हुए और शेयर कैपीटल को देखते हुए गवर्नमेंट हर कम्पनी के मैनेजिंग एजेंट के लिये मिनीमम निर्धारित कर सके । आप जानते ही हैं कि यह मैनेजिंग एजेंट्स अपना एग्रीमेंट तो जब कम्पनी के प्रमोटर्स बनते हैं उनसे पहले ही कर लेते हैं कि हमको इतनी रकम तब लेने का अधिकार रहेगा। वह सब तो पहले ही प्रास्पेक्ट्स में शामिल कर देते हैं, इस वास्ते इसमें कोई चेक लगाने की ज़रूरत है । इस मौजूदा बिल में निस्सन्देह रोक लगाने की कोशिश की गयी है । मैनेजिंग एजेंट्स पहले ज्यादा से ज्यादा पन्द्रह वर्ष के लिये मुकर्रर किये जा सकेंगे पन्द्रह वर्ष से ज्यादा के लिये कोई मैनेजिंग एजेंट मुकर्रर नहीं किया जायगा। मेरी समझ में यह जो रोक लगायी गयी है यह बहुत अच्छी है । बिल की व्यवस्था के अनुसार जो मौजूदा मैनेजिंग एजेंट्स हैं उनका सबका कार्यालय सन् १९५९ में समाप्त हो जायगा और अगर उनको आगे चलाना होगा तो उनके साथ नया एग्रीमेंट करना होगा । मेरी समझ में यह बहुत अच्छी चीज़ इस बिल के अन्दर रक्खी गयी है । जब इतनी बड़ी अच्छी चीज़ उसमें सुधार करने के लिये आपने रख दी तो हमको ज़रा और आगे बढ़ना चाहिये और यह रखना चाहिये कि मैनेजिंग एजेंट्स का जो कार्यकाल आगे बढ़ेगा उसको हम ज्यादा नहीं बढ़ायेंगे । आपने उसकी टर्म प्रारम्भ से पन्द्रह वर्ष की रक्खी है, चलिये ठीक है पन्द्रह वर्ष, वैसे तो दस साल बहुत काफ़ी था । मैं मान सकता हूं कि आप की कुछ इंडस्ट्रीज़ ऐसी हों जो पन्द्रह साल में प्राफिट दे सकती हों और पूरी तौर पर आगे बढ़ सकती हों । लेकिन यह जो आपने उसके बाद दस साल तक के लिये उसके एक्सटेंशन का बिल में रक्खा है, वह मेरी समझ में ठीक नहीं है । आप कह सकते हैं कि अगर मैनेजिंग एजेंट्स को अपना फ़ायदा नहीं दिखलाई देगा और काफ़ी सहूलियत नहीं दिखाई देगी तो मैनेजिंग एजेंट कम्पनी कायम करने को तैयार न होंगे । लेकिन मैं पूछता हूं कि जब एक दफ़ा मैनेजिंग एजेंट्स काम करने के लिये तैयार हो गये और वे इस बात पर राज़ी हो गये कि उनका कार्यकाल पन्द्रह साल के लिये रहेगा, इस शर्त पर जब वे काम करने को आ गये हैं और व्यवसाय उनकी देख रेख में इन १५ वर्ष में चलने लगा तब मेरी समझ में नहीं आता कि दस साल का दूसरा एक्सटेंशन उनको क्यों दिया जाय, दस साल एक बहुत लम्बा अर्सा होता है । इतना ज्यादा एक्सटेंशन देने की ज़रूरत नहीं है, आप अगर ज़रूरी हो तो इनका कार्यकाल थोड़ा एक्सटेंड कर दीजिये ताकि शेयर होल्डर्स का उन पर विश्वास बराबर कायम रह सके और शेयर होल्डर्स उनके कामों की बराबर नाप तोल कर सकें । अगर डाइरेक्टर्स समझते हों कि यह मैनेजिंग एजेंट ठीक काम कर रहा है तो शेयर होल्डर्स उनका टर्म बराबर बढ़ा सकते हैं, मगर मैं समझता हूं कि इस कानून में दूसरा एक्सटेंशन दस साल के लिये रखना बिल्कुल अनुचित है । ज्यादा से ज्यादा आप चाहें तो पांच साल के लिये उसको रख लीजिये । मुझे तो पन्द्रह साल के लिये जो उसकी टर्म रक्खी गयी है, वह ही ज्यादा मालूम होती है, ख़ैर वह मान भी ली जाय, लेकिन यह चीज़ मेरी समझ में कतई नहीं आती कि दस साल के लिये उसका दुबारा एक्सटेंशन क्यों रखा जाय, अगर एक्सटेंशन ज़रूरी हो तो मेरा कहना यह है कि उसको पांच साल से ज्यादा दुबारा न रक्खें, यह उसकी मरज़ी पर है अगर वह इस शर्त पर रहना चाहता है तो रहे वरना न रहे व्यवसाय तो १५ साल में चल चुका होगा । व्यापार चल

[श्री कृष्ण चन्द्र]

चुकता है। इसलिये मैं चाहता हूं कि यह दस साल के एक्सटेंशन की जो आपने उसके लिये रियायत रक्खी है उसको कम कीजिये।

सभापति जी, अब मैं कुछ इनवेस्टिगेशन के बारे में कहना चाहता हूं। पुराने बिल में भी इसका प्राविज़न रक्खा गया है। इस मौजूदा बिल में इनवेस्टिगेशन की व्यवस्था को आगे बढ़ाया गया है और गवर्नमेंट इसके लिये बधाई की पात्र है। अभी तक गवर्नमेंट को इनवेस्टिगेशन करने का अधिकार था लेकिन उसको यह अधिकार तब हासिल था जब उसके लिये दरख्वास्त करने वाले शेयर होल्डर्स की संख्या दो सौ हो या दस परसेंटेज शेयर कैपीटल का हो। अगर इतने शेयर होल्डर्स गवर्नमेंट को दरख्वास्त दें और गवर्नमेंट संतुष्ट हो जाये कि उनके पास इस बात को साबित करने की काफ़ी शहादत है कि इस व्यवसाय अथवा कम्पनी के कार्य संचालन में बेईमानी हो रही है और अधिकारों का दुरुपयोग हो रहा है तो गवर्नमेंट जांच करा सकती है, यह इनवेस्टिगेशन का प्राविज़न इस कानून में भी रखा गया है लेकिन साथ ही एक कड़ी शर्त भी रखी दी गई है। जहां उसमें यह रक्खा गया है कि शेयर होल्डर्स कम से कम दो सौ की तादाद में आयें, या शेयर कैपिटल का दसवां भाग हो, उतनी तादाद में अगर शेयर होल्डर्स इकट्ठे होकर इस बात की दरख्वास्त करें कि जांच कराई जाय। सभापति जी यह कोई आसान काम नहीं है, बड़ा मुश्किल काम है। यह तभी हो सकता है कि जब उस कम्पनी में काफ़ी बेईमानी और ख़राबियां चल रही हों। इतनी तादाद में शेयर होल्डर्स के दरख्वास्त करने पर फिर जब गवर्नमेंट उनकी शहादत देख कर इस बात का इतमीनान कर लेती है कि वाकई अमुक कम्पनी में बेईमानियां चल रही हैं तब जांच शुरू करने के पहले गवर्नमेंट उनसे जांच का खर्चा भी जमा कराये मेरी समझ में नहीं आया कि यह जांच का खर्चा जमा कराने की व्यवस्था क्यों रखी गई है। जब आप शेयर होल्डर्स को जांच (इनवेस्टिगेशन) कराने का अधिकार देते हैं और मैं मानता हूं कि यह एक बड़ा अधिकार आप उनको देते हैं, तो मेरा कहना यह है कि अगर आप उन को यह अधिकार देने जा रहे हैं तो उसको खुले दिल से दीजिये और इसमें इस तरह खर्चे के जमा कराने की रुकावट मत डालिये जिससे कि शेयर होल्डर्स को दिया हुआ अधिकार दूसरे हाथ से आप छीन लें। जांच के खर्चे की शर्तें आपने बहुत कड़ी रखी हैं वे उसको कहां से लायेंगे। शेयर होल्डर्स तो बेचारे वैसे ही मर रहे होंगे। कम्पनियों में मुनाफा होगा ही नहीं और उनको उलटा घाटा उठाना पड़ रहा होगा। उन शेयर होल्डर्स से फिर यह कहा जाय कि तुम इनवेस्टिगेशन के खर्चे के तौर पर इतना रुपया जमा कराओ तब आगे बढ़ा जायगा, यह किसी तरह उचित और न्यायसंगत नहीं है। आखिर गवर्नमेंट तो तभी इनवेस्टिगेशन शुरू करेगी जब कम से कम दो सौ शेयर होल्डर्स उसके लिये दरख्वास्त करेंगे और गवर्नमेंट उनकी शहादत से अपना इतमिनान कर लेगी कि हां वाकई अमुक कम्पनी में बहुत गड़बड़ी है और बेईमानी चल रही है, उस हालत में यह कास्ट के जमा करने की बात मुझे ठीक नहीं जंचती और मैं चाहता हूं कि वह शर्त उसमें से हटा दी जाय।

फिर इसमें रक्खा गया है कि इनवेस्टिगेशन एक तो शेअर होल्डर्स की दरख्वास्त पर हो सकती है और एक कम्पनी के रेजोल्यूशन पर हो सकती है, लेकिन कम्पनी के रेजोल्यूशन के लिये आपने रक्खा है 'स्पेशल रेजोल्यूशन' स्पेशल रेजोल्यूशन की जो व्याख्या की गई है वह इतनी सख्त की गई है कि स्पेशल रेजोल्यूशन कभी आ ही नहीं सकता तिगने मेम्बर जब किसी चीज के लिये कहें

यानी एक चौथाई एक तरफ और बाकी तीन चौथाई एक तरफ हों; तब स्पेशल रेज़ोल्यूशन आ सकेगा। हम देखते हैं कि जो यह स्पेशल रेज़ोल्यूशन का तरीक़ा उसमें है यह निहायत नामुमकिन है कि इस बिल के अन्दर गवर्नमेन्ट को यह अधिकार है कि वह इनवेस्टिगेशन खुद करवा सकेगी। आप यह भी अधिकार दे रहे हैं कि २०० शेअर होल्डर्स या १/१० शेअर कैपीटल की तादाद में शेयर होल्डर्स भी जांच करवा सकेंगे। तक शेअर होल्डर्स की मीटिंग में बहुमत से यह प्रस्ताव पास हो जाये, आप इसको क्यों नहीं मानते? सभापति जी, मेरा मकसद यह है कि हमारी सेलैक्ट कमेटी इस बात पर गौर करे कि जब यह रियायत, यह सुलभता, यह आसानी, आप शेअर होल्डर्स के लिये दे रहे हैं कि वह कम्पनी की बदइन्तजामी की जांच कर सकें, तो इस को खुले दिल से देना चाहिये, इसमें ऐसी रुकावट जान बूझ कर नहीं डालनी चाहिये कि आप यह अधिकार एक हाथ से तो दें लेकिन दूसरी ओर उसका इस्तैमाल न हो सके, शेअर होल्डर्स के लाभ में इसका प्रयोग कभी न हो सके ऐसी शर्त लगा दें। जब हमने इसको रखा है तो शेअर होल्डर्स को मालूम होना चाहिये कि हमने उनको यह अधिकार दिया है और वह इससे लाभ उठा सकते हैं।

आखिर में मुझे यह अर्ज करना है कि इन्वेस्टिगेशन करने के बाद गवर्नमेन्ट को जब इस बात का पक्का सबूत पहुंच जाय कि वाकई कम्पनी के अन्दर खराबियां हुई हैं और बदइन्तजामियां अमल में आई हुई हैं तथा बेईमानियां हुई हैं, तो भी गवर्नमेन्ट के लिये उसके बाद कोई अधिकार नहीं है। गवर्नमेन्ट को सिर्फ इतना अधिकार दिया गया है कि वह दोषियों पर मुकद्दमा चला सकती है। मुकद्दमा तो शेअर होल्डर्स भी चला सकते हैं। आज भी खुला हुआ अधिकार है कि गवर्नमेन्ट उन लोगों को प्रासिक्यूट कर सकती है जिन को मुजरिम पाया जाय। गवर्नमेन्ट उन लोगों से डेमेजेज का दावा भी कर सकती है जिन्होंने इन्तज़ाम में गड़बड़ी की है। यह कोई कारगर अधिकार नहीं है। मैं चाहता हूं कि सेलेक्ट कमेटी इस बात पर गौर करे कि जब गवर्नमेन्ट ने इतनी विस्तृत जांच करा ली और उसको इस विस्तृत जांच से इस बात का इतमीनान हो गया कि वाकई कम्पनी के संचालन में खराबियां हैं और इन आदमियों ने खराबियां की हैं तो गवर्नमेन्ट को अधिकार होना चाहिये कि वह इंस्ट्रक्शन्स (आदेश) जारी कर सके और इस बात का भी अधिकार होना चाहिये कि अगर किसी मैनेजिंग एजेंट या डाइरेक्टर ने बेईमानी की है, एम्बैजलमेन्ट किया है, अपने अधिकारों का दुरुपयोग किया है तो वह उस मैनेजिंग एजेंट या डाइरेक्टर को निकाल सके। यह कहा जा सकता है कि इतना बड़ा अधिकार गवर्नमेन्ट को नहीं देना चाहिये, क्योंकि गवर्नमेन्ट चाहे जो भी हो, इस बात का क्या सबूत है कि वह अच्छे रूप से ही चलेगी? लेकिन, सभापति जी, मैं अर्ज करना चाहता हूं कि जब इंडस्ट्रियल डेवेलपमेन्ट के कानून के अन्दर हम यह पास कर चुके हैं, उसमें गवर्नमेन्ट को हम अधिकार दे चुके हैं कि गवर्नमेन्ट को यह अधिकार प्राप्त है कि वह तहकीकात के बाद किसी व्यवस्था के लिये हिदायतें जारी कर सकेगी, तो इसमें भी हम उसको यह अधिकार दे सकते हैं। बहां हिदायतें कम्पनी ऐज ए हाल के लिये होगी, यह नहीं कि कम्पनी में जो कसूरवार हो उसको सजा देने का उस कानून में अधिकार ह। यह आप इंडस्ट्रीयल डेवेलपमेन्ट कानून के अन्दर नहीं कर सकते। अब तो आप कम्पनी ला बना रहे हैं तो उसी के नक्शे कदम पर जाकर आप यह क्यों नहीं रख सकते कि तहकीकात और जांच के बाद गवर्नमेन्ट के सामने अगर यह साबित हो जाय कि फलाने फलाने डाइरेक्टर या मैनेजिंग एजेंट कसूरवार

[श्री कृष्ण चन्द्र]

हैं, उनके खिलाफ सुबूत पहुंच चुका हो, तो गवर्नमेन्ट को अधिकार होगा कि वह उनको प्रासिक्यूट कर सके और उस डाइरेक्टर या कसूरवारों को हटा सके। यह भी अधिकार गवर्नमेन्ट को हो कि गवर्नमेन्ट इन्तजाम के लिये आगे के वास्ते कम्पनी को हिदायतें भी जारी कर सके।

सभापति जी, अन्त में मैं यह चाहता हूं कि जब सेलेक्ट कमेटी इस के ऊपर गौर करे तो उसको एक लक्ष्य लेकर गौर करना चाहिये। बिना किसी लक्ष्य को लिये हुए उसको गौर नहीं करना चाहिये। उसको यह सोचना चाहिये कि यह जो कम्पनी का तौर तरीका है वह एक तरह से राष्ट्रीयकरण का इब्तदाई रूप है। जैसा हमारे माननीय कामर्स और इंडस्ट्री मिनिस्टर ने बताया, सन् १९३६ में जो हमारे बड़े नेता श्री भूलाभाई देसाई थे, उन्होंने बहुत सी बातें कही थीं। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि १९३६ और १९५४ में बहुत बड़ा फर्क हो गया है। सन् १९३६ में कम्पनियों के मैनेजिंग एजेन्ट्स लोगों के पास जाते थे, उनसे रुपया इट्ठा करते थे। लेकिन आज यह कम्पनियां जड़ पकड़ चुकी हैं। १९५४ में कम्पनियों का जो नया विकास सामने आया है, उसको हम देख रहे हैं। आज तो हिन्दुस्तान भर में कार्टेल्स बन गये हैं। एक कम्पनी, दो कम्पनी, चार कम्पनी मिल कर एक तरह का कार्टेल्स बना लेती हैं। आज जब हिन्दुस्तान में एक जाल कम्पनियों का हर जगह बना हुआ है, हमें इस पर अब दूसरे दृष्टिकोण से गौर करना चाहिये। बस मैं यही कहना चाहता हूं।

श्री राघवाचारी (पेनुकोंडा) : इन दो तीन दिनों में इस सम्बन्ध में हुई चर्चा से यह स्पष्ट हो गया है कि समवाय विधि के होते हुए भी अनेकों समवायों के जन्म लेने और कुप्रबन्ध के कारण थोड़े दिनों में उनके समाप्त हो जाने से लोग इसे व्यर्थ समझने लगे हैं। मेरा विचार है कि राष्ट्र के चरित्र की उन्नति किए बिना यह असम्भव है, और जब तक यह न हो, व्यापारी देश हित की नहीं, बल्कि अपने हित की ही बात करते रहेंगे और कुछ न कुछ रास्ता निकालते रहेंगे।

दूसरी बात यह है कि अंशों के आधार पर समवाय खोलने की बात भारतीय नहीं विदेशी है और युद्धोत्तर काल में यह एक व्यवसाय ही बन गया है। इसी से हमारी विधि भी विदेशी विधि पर आश्रित है और तदनुसार बदलती रहती है, इस प्रकार यह ग्रंथ इतना बड़ा हो गया है। विधेयक में कुछ अनुसूचियां भी हैं और प्रायः सब कुछ उसमें रखा गया है। इसीसे इन सारे विवरणों के कारण विधेयक नयनशील न रह कर कठोर और लम्बा हो गया है।

यह विधेयक समवाय विधि समिति द्वारा पूर्णतः विचार करने के बाद की गई सिफारिशों पर आधारित है, पर लक्ष्य और कारणों के विवरण तथा वित्त मंत्री के भाषण से पता चलता है कि व्यापारियों के साथ हुई बातचीत के फलस्वरूप वह विधेयक में कुछ संशोधन करेंगे, परन्तु यद्यपि प्रवर समिति उन पर विचार करेगी तथापि यदि वह हमें पहले से बता दिया जाता तो ज्यादा अच्छा रहता। यदि वे संशोधन विशेष महत्वपूर्ण हैं तो उनका संकेत पहले ही कर दिया जाए।

इस विधेयक पर हुई बहुत कुछ आलोचना सर्वथा अप्रासंगिक थी। मख्य बात यह है कि समवाय बनाने आदि की गतिविधि में आप प्रत्येक स्थल पर क्या सुरक्षा रखना चाहते हैं। इस विधेयक को बिल्कुल निरर्थक बताना ठीक नहीं है। इसमें यथासम्भव बहुत सी सुरक्षाएं रखी गई हैं। परन्तु मानवीय प्रकृति की दृष्टि

में चतुर लोग इसके उल्लंघन के रास्ते खोज ही निकालेंगे । उपबंधों का उल्लंघन भी एक व्यापार बन जाएगा । अतः सावधानी और सुरक्षा वाले उपबंध आवश्यक अवश्य हैं, पर इन उपबन्धों के रख देने से ही लक्ष्यपूर्ति नहीं हो सकती ।

समिति ने इस गतिविधि के नियंत्रण के लिए एक संगठित आयोग बनाने की बात कही थी, पर केन्द्रीय सरकार ने उसे बिल्कुल अस्वीकृत करते हुए उसे एक प्रशासन-शाखा मात्र बना दिया है ।

जांच और निरीक्षण के उपबन्ध अत्यावश्यक हैं, पर विभागीय जांचों आदि में यह खतरा रहता है कि इसमें भेदभाव और लोगों को परेशानी की गुंजाइश बढ़ जाती है । अतः संविहित निकाय का होना अधिक उपयुक्त था ।

अब प्रबन्ध-अभिकर्ताओं के कुशासन को सुधारने के लिए रखे गए उपबन्धों को लें । संचालकों को उधार देने-लेने की शक्तियां कम की गई हैं और उनकी अधिकतम आयु-सीमा ६५ रखी गई है । परन्तु, आयु-सीमा के दूसरे छोर न्यूनतम आयु-सीमा को भी निश्चित कर देना चाहिए था । यह भी आवश्यक है ।

एक संचालक के लिए यह भी बंधन रखा गया है कि वह २० समवायों से अधिक का संचालक न हो । शायद कुछ व्यक्ति २० से भी अधिक समवायों के भी संचालक होते हैं, परन्तु मेरी समझ से यह संख्या भी बहुत अधिक है । देश में अनुभवी व्यक्तियों का इतना भारी अभाव नहीं है। अब तक की अनेकों आवश्यकताओं में से कुछ की अब पूर्ति की जा रही है । संस्था-विधान के सम्बन्ध में यह कहा गया है कि विशेषज्ञ का अभिमत ग्रहण करके उसमें मुद्रित किया जाए, पर इससे कुछ लोग लाभ उठा सकेंगे और फिर इसकी परिभाषा कौन करेगा कि कौन विशेषज्ञ है और कौन नहीं ?

प्रबन्धकों और प्रबन्धक अभिकरकों का प्रश्न भी बड़ा टेढ़ा है । परिस्थितियों को देखते हुए कोई यह नहीं कह सकता कि प्रबन्धक अभिकरण न रहें । प्रत्येक व्यक्ति प्रबन्ध नहीं कर सकता, अतः मैं इस प्रथा को समाप्त करने के पक्ष में नहीं हूं ।

सुरक्षाएं रखी गई हैं, पर मूलभूत प्रश्न यह है कि उन पर किस भावना के साथ चला जाएगा । संतुलन-पत्र के बारे में कुछ विवरणों के बताने का उपबंध रखा गया है । जहां तक लेखा-परीक्षकों और लेखापालों की नियुक्ति आदि का प्रश्न है, पुरानी और नई विधि में कोई अन्तर नहीं है । अंशभाजकों आदि को सरकारी एजेंसी और न्यायालय तक जाने की शक्ति दी गई है, इससे मुकद्दमेबाजी बढ़ेगी, क्योंकि प्रत्येक कम्पनी में कुछ दल होते हैं । मुझे लगता है कि सुप्रबन्ध की दृष्टि से रखे गए ये उपबन्ध संस्थाओं के कार्य में रोड़ा ही बनेंगे । इससे वकीलों का ही भला होगा ।

अंशों और संचालकों आदि के अनुपात वाले उपबन्धों का भी अनुचित लाभ उठाया जाएगा । प्रबन्धक संचालक और अन्य लोगों के बीच प्रबन्ध के बंटे रहने का उपबन्ध किया गया है । सरकारी ओहदों में द्वैध शासन का हमें अनुभव है । इससे बाधाएं और परेशानियां ही बढ़ेंगी । आलोचकों का कहना है कि इन सुरक्षाओं के रहते हुए भी राष्ट्रीय चरित्र में सुधार हुए बिना केवल विधान बना देने से ही यह सम्भव नहीं है । सुरक्षाएं तो हों पर उनके प्रवर्तन में कुछ नयनशीलता रहनी चाहिए, जिससे भूतकाल की ही नहीं भविष्य की कठिनाइयों का भी सामना किया जा सके ।

समवाय बैंक-व्यवसाय के लिए भी बन सकते हैं, पर सरकार को ऐसे निजी समवाय अब न बनने देने चाहियें । यह कार्य सहकारी संस्थाओं के ऊपर छोड़ दिया जाए । इनका परिचालन राष्ट्रीकृत उपक्रमों के रूप में होना

[श्री राघवाचारी]

चाहिए। निजी बैंक व्यवसाय का अर्थ ब्याज दरों का बढ़ना है। यह कार्य स्वयं सरकार को करना चाहिए। आप उद्योगों के लिए अनेक निगम बना रहे हैं, वैसा ही निगम देहाती ऋणों के लिए भी बनाइए।

यद्यपि इस विधेयक में भी अंग्रेजी विधान का अनुकरण किया गया है तथापि यह सम्पदा शुल्क विधेयक जितना कठिन नहीं है। उन उपबन्धों को हम समझ भी न पाते थे, इसमें ऐसा नहीं है। विधेयक में ६१२ धाराएं हैं तथा संचालकों की अर्हताओं और अनर्हताओं आदि को कई स्थानों पर दुहराया गया है। इससे आकार बहुत बढ़ गया है। इससे इनके पढ़ने में किसी को चाव नहीं रहता।

प्रवर समिति को विधेयक के दो-तीन पहलू बदलने पड़ेंगे। नियन्त्रण के लिए सरकारी संगठन के स्थान पर संविहित निगम अधिक उपयुक्त रहेगा। जांच की शक्तियों आदि के बारे में सरकार को कुछ सुरक्षाएं रखनी चाहिएं जिससे सरकार कठोर आलोचना की पात्र न बनने पाए। जनता में यह भावना भी पैदा न होने देनी चाहिये कि दलगत बातों को प्रोत्साहित किया जा रहा है। प्रवर समिति इन उपबन्धों पर आगे और विचार करे।

श्री सिंहासनसिंह (गोरखपुर जिला—दक्षिण) : पंडित मोतीलाल नेहरू ने जब अपनी मृत्यु के समय महात्मा गांधी से कहा कि वह स्वराज्य न देख सकेंगे, तो महात्मा गांधी ने कहा था कि मैं १२५ वर्ष जिऊंगा और सम्भव है स्वराज्य के बाद अपने स्वप्नों का राम राज्य स्थापित करने में मुझे अपने देशवासियों के साथ भी अहिंसात्मक संघर्ष करना पड़े। आज वह भविष्यवाणी सच हुई है और यदि वह आज जीवित होते तो यह अहिंसात्मक संघर्ष छेड़ देते। यदि वह आज जीवित होते, तो देश का रूप कुछ और ही होता। उन्होंने २६ जनवरी, १९४८ को अपनी प्रार्थना सभा में कहा था :

[**श्रीमती खोंगमेन** पीठासीन हुईं]

"आज २६ जनवरी, स्वतंत्रता दिवस है। जब तक हमारी आजादी की लड़ाई जारी थी, और आजादी हमारे हाथ में नहीं आई थी तब तक इस का उत्सव मनाना जरुर माने रखता था, किन्तु आज आजादी हमारे हाथ में आ गई है, और हम ने उस का स्वाद चखा है तो हमें लगता है कि आजादी का हमारा स्वप्न एक भ्रम था, जो कि अब गलत साबित हुआ है। कम से कम मुझे तो ऐसा ही लगता है।

आज हम किस चीज का उत्सव मनाने बैठे हैं, हमारा भ्रम गलत साबित हुआ, इस का नहीं।"

"मगर हमें अपनी इस आशा का उत्सव मनाने का जरुर हक है कि काली से काली घटा अब हट गई है, और हम उस रास्ते पर हैं कि जिस पर जाते आते हुए तुच्छ से तुच्छ ग्रामवासी की गुलामी का अन्त आयेगा और हिन्दुस्तान शहरों का दास बन कर के नहीं रहेगा। बल्कि देहातों के विचारमय उद्योगों के माल की विज्ञप्ति और बिक्री के लिये शहरों का उपयोग करेगा।"

इस विधेयक में १९३६ से बहुत संशोधन किये जा चुके हैं। १९३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६ और फिर अंत में इसी सदन में १९५१ में इसमें संशोधन किए गए हैं। और सरकार ने समगय व्यवस्था की बुराइयां दूर की हैं। अब सरकार को देश की अर्थ व्यवस्था के स्वरूप का अंतिम निश्चय कर लेना चाहिये। संविधान में हमने लोक कल्याण तक के सिद्धांत अपनाए हैं। सरकार को अब निश्चय कर लेना चाहिये कि हम पूंजीवादी, समाजवादी, या गांधीवादी कौन

सी अर्थव्यवस्था अपनाएंगे । हम गांधीवादी और पूंजीवादी दुहरी अर्थव्यवस्था अपनाए हुए हैं, जो हमारी प्रगति में बाधक बन रही है । कांग्रेस ने बागडोर संभालते समय कहा था कि वह दस वर्ष तक निजी उद्योग-खंड में हस्तक्षेप न करेगी । इस पंचवर्षीय योजना के साथ वह समय पूरा हो जायगा । परन्तु इस विधेयक द्वारा प्रबन्ध-संचालकों आदि को १५ वर्ष का समय और दिया जा रहा है । आय-कर जांच आयोग के कार्य विवरण के पृष्ठ १५ में बताया गया है कि एक वस्त्र मिल के प्रबंध-अधिकरण ने किस प्रकार अपनी आय में सोने चांदी के सट्टे के झूठ-सच घाटे दिखाए और लंबी चौड़ी तनख्वाहों के नाम पर भी खर्चे बढ़ा कर दिखाए गए और कम्पनियों के काम से नहीं, बल्कि निजी उपयोग के लिये किराए पर लिए गए मकानों के किराए भी कम्पनी के नाम डाले गए । ऐसे ही दोषों के कारण सदन में बहुत थोड़े ही सदस्यों ने इस प्रबन्ध अधिकरण व्यवस्था का समर्थन किया है । सरकार ने स्वयं इस विधेयक की समिति से ऐसी ही सिफारिश की थी । अब यद्यपि इस व्यवस्था को रखा तो जा रहा है, परन्तु खण्ड ३०७ से आगे के लगभग ५२ खड इनकी शक्तियों को कम कर रहे हैं । प्रबंध अभिकर्ता समवाय की सभी आवश्यकताओं और कार्यों की देखभाल करता है, पूंजी और कच्चे माल का प्रबंध तथा उत्पादनों का विक्रय आदि सब कुछ वह करता है और सभी बातों के लिए उसे कमीशन मिलता है । सबसे ऊपर फिर उसे लाभ का अंश भी मिलता है । यद्यपि विधेयक में एक उपबंध है कि वह समवाय के प्रधान केन्द्र वाले राज्य में अपने आप को क्रय या विक्रय का अभिकर्ता नियुक्त नहीं कर सकता, तथापि अधिकांश समवायों के प्रधान केन्द्र कलकत्ता और बम्बई में तथा उनका कार्य क्षेत्र मुख्यत: अन्य राज्यों में होने से उनके लाभ में कोई बाधा नहीं पड़ती । खंड ३३४ में ५०,००० रुपये के न्यूनतम लाभ का उपबंध है, और चूंकि एक व्यक्ति २० समवायों तक का प्रबंध अभिकर्ता हो सकता है, अत: भले ही सभी समवाय घाटे में चलें, उसे १० लाख रुपए मिल ही जायंगे ।

साथ ही समवाय के एक संकल्प के अधीन वह समवाय का ठेकेदार हो सकता है । अंशयाजकों की ऐसी बैठकों की गणपूर्ति संख्या ५ ही होती है । छोटे अंशयाजकों को आने जाने का किराया नहीं मिलता, अत: बहुत कुछ उनकी अनुपस्थिति में ही होता है । और प्रदत्त मतों (प्रोक्सी वोटिंग) की प्रणाली के कारण प्रबंध-अभिकर्ता को वांछित मत मिल जाते हैं ।

प्रबंधक अभिकर्ता को तभी हटाया जा सकता है जबकि दो निर्देशक एक बैठक की मांग करें । उसे निर्देशकों के संकल्प द्वारा ही हटाया जा सकता है । किन्तु अधिकतर निर्देशकों का अभिकरण में हित सन्निहित होगा। इसलिए प्रबन्धक अभिकर्ता प्रणाली एक स्थायी चीज़ बन गई है । हम उन पर जो नियंत्रण रखने जा रहे हैं वह अधिक से अधिक उनके लिए कुछ कष्टदायक हो सकता है, किन्तु वह सब प्रकार के नियंत्रणों से बच निकलने का उपाय करेंगे और अपनी ही रक्खेंगे । इसके लिए यह बहुत आवश्यक है कि यह नियंत्रक-कार्य किसी पदाधिकारी विशेष को न सौंप कर एक संविहित निकाय को सौंपा जाए । किन्तु सरकार ने इसे अपने एक पदाधिकारी को सौंपा है ।

इस मामले को व्यवहृत करने के दो तरीके हैं । एक है राष्ट्रीयकरण । यह हमारा आम अनुभव रहा है कि राष्ट्रीकृत उद्योग केवल लाभ पर नहीं चल रहे हैं। वरन् हानि पर चल रहे हैं । हर रोज़ हम सदन में सुनते हैं कि यह निगम अथवा वह निगम ठीक प्रकार से कार्य नहीं कर रहा । इसका मुख्य कारण यह है कि हमारे आई० सी० एस० के लोगों

[श्री सिंहासनसिंह]

को सारे विषयों में पारंगत समझा जाता है और ऐसे राष्ट्रीकृत उद्योगों में जिनका क, ख, ग भी वे नहीं समझते उन्हें प्रमुख स्थानों पर नियुक्त कर दिया जाता है । समस्त प्रणाली में दोष यह है कि हम देश के लिए नहीं, अपने लाभ के लिए सोचते हैं । जब हम किसी उद्योग को राष्ट्रीयकृत करते हैं तो देखते हैं कि यह सक्षम रूप से नहीं चल रहा, यदि इसे निजि उद्योगपतियों के हाथ में छोड़ देते हैं तो पाते हैं कि यह देश के हित के लिए नहीं चलाया जा रहा । दोनों के बीच में आम लोगों को तकलीफ उठानी पड़ती है ।

फिर हमें इससे बचने का क्या उपाय करना चाहिए । मेरी समझ में, जैसा कि आचार्य विनोबा भावे ने कहा, उद्योगों को कुटीर उद्योग के आधार पर चलाने का समय आ गया है । उदाहरण के लिए वस्त्र तथा चीनी उद्योगों को लीजिए । यदि समस्त वस्त्र तथा चीनी मिलें कल बन्द कर दी जाएं तो देश नंगा या चीनी-रहित नहीं हो जायगा । इन उद्योगों को हम कुटीर आधार पर आसानी से चला सकते हैं ।

आचार्य विनोबा भावे ने कहा कि भूमि, वायु तथा जल भगवान के हैं । अब हमने समस्त राज्यों से जमींदारी प्रथा का अंत कर दिया है । किन्तु बिड़ला तथा टाटा जैसों के लिये क्या किया है ? अब समय आ गया है जब कि हमें भूमि की उपरिसीमा निर्धारित कर देनी चाहिए । किन्तु इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया जा रहा है । यदि आप आज भूमि का विभाजन नहीं करते तो बल-प्रयोग द्वारा इसका विभाजन होगा । हम चाहते हैं कि सारा कार्य क्रान्ति तथा शक्ति-प्रयोग द्वारा न हो कर गांधीवादी तरीके से हो । अब हमें अपनी अर्थ-व्यवस्था में परिवर्तन करने का समय आ गया है ।

प्रस्तुत विधेयक में धारा ३३४ में प्रबन्धक अभिकर्ताओं के लिये न्यूनतम पारिश्रमिक का उपबन्ध किया गया है । चाहे कोई लाभ हो या ना हो, फिर भी प्रबन्धक अभिकर्ता को ५० हजार रुपए पारिश्रमिक के रूप में मिलेंगे । ऐसा क्यों है ? यह चीज बहुत भद्दी दिखाई देती है कि कम्पनी को कोई लाभ हो या न हो किन्तु प्रबन्धक अभिकर्ता को ५० हजार रुपए मिल जायें । मैं समझता हूं कि इस धारा पर पुनर्विचार की आवश्यकता है ।

इसी प्रकार धारा ३२९ में कहा गया है कि प्रबन्धक अभिकर्त्ता को १२½ प्रतिशत तक लाभ मिल सकता है । मुझे नहीं मालूम कि इसमें उसके खरीद-फ़रोक्त के कार्यों का पारिश्रमिक भी सम्मिलित है अथवा नहीं । किन्तु यदि नहीं है, तो १२½ प्रतिशत बहुत अधिक है । सरकार की बैंक दर ३½ प्रतिशत है, बैंक ५ या अधिक से अधिक ६ प्रतिशत पर उधार देते हैं । किन्तु प्रबन्धक अभिकर्त्ता के लिए आपने १२½ प्रतिशत रक्खा है । वह हर जगह सुरक्षित है । यदि आप इस को नियंत्रण कहते हैं, तो मुझे नहीं मालूम कि विनियंत्रण का अर्थ आप क्या लेते हैं । यदि आप उन्हें रखना ही चाहते हैं, तब फिर उन्हें अधिक स्वतंत्रता दीजिए । इससे वे अधिक से अधिक लाभ कमाने का प्रयत्न करेंगे और अन्य हिस्सेदारों को भी कुछ मिल जाएगा । किन्तु जब आपने उनकी आय आश्वस्त कर दी है तो अन्य हिस्सेदारों का लाभ बहुत कम हो जायगा । इसलिए मैं कहता हूं कि यदि हम प्रबन्धक अभिकर्ता प्रणाली पर नियंत्रण रखना चाहते हैं तब तो पूरी तरह से करें अन्यथा इसे बिल्कुल ही समाप्त कर दें ।

सभापति महोदया : दूसरे वक्ता को बुलाने से पूर्व मैं माननीय श्री त्रिवेदी द्वारा आज प्रातः उठाए गये औचित्य प्रश्न

पर विधि मंत्री से प्रकाश डालने को कहूंगी ।

श्री बिस्वास : औचित्य प्रश्न संविधान की धारा ११७ (१) के अंतर्गत उठाया गया था जिसमें कहा गया है कि : "अनुच्छेद ११० के खंड (१) में (क) से (च) तक के उपखंडों में उल्लिखित विषयों में से किसी के लिये उपबन्ध करने वाला विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की सिपारिश के बिना पुरःस्थापित या प्रस्तावित न किया जायगा ।" यदि आप अनुच्छेद ११० (१) को देखें तो पायेंगे कि वहां (क) से (च) तक उपखंड हैं। उपखंड (क) के अनुसार, "इस अध्याय के प्रयोजनों के लिये, कोई विधेयक धन-विधेयक समझा जायेगा, यदि उसमें निम्नलिखित विषयों में से सब अथवा किसी से सम्बन्ध रखने वाले उपबन्ध अंतर्विष्ट ही हैं, अर्थात् . . ." और फिर ये विषय उपखंड (क) से (च) तक में दिए हुए हैं। उपखंड (क) में "किसी कर का आरोपण, उत्सादन, परिहार, बदलना या विनियमन" है । मेरे माननीय मित्र द्वारा यह आपत्ति उठायी गई थी कि अनुसूची १, जिस में कि वहां उल्लिखित कुछ फीसों के आरोपण का उपबन्ध किया गया है, विधेयक को उपखंड (क) की ज़द में ले आता है और तदनुसार अनुच्छेद ११७ के खंड १ से प्रभावित होता है ।

इस आपत्ति का मेरा उत्तर यह है । सर्वप्रथम तो यह कर नहीं, फीस है । यदि आप अनुच्छेद ११७ के खंड (२) को देखें तो इसमें एक बचत खंड है । इसमें कहा गया है कि "कोई विधेयक या संशोधन उक्त विषयों में से किसी के लिये उपबन्ध करने वाला केवल इसलिये न समझा जायगा कि वह जुर्मानों अथवा अन्य अर्थ-दण्डों के आरोपण का, अथवा अनुज्ञप्तियों के लिये फीसों की, अथवा की हुई सेवाओं के लिये फीसों की, अभियाचना या देने का उपबन्ध करता है . . . इत्यादि" । मेरा निवेदन यह है कि अनुसूची १ में जो फीस है वह "फीसों अथवा की हुई सेवाओं" के अंतर्गत आ जाती है । इसलिये यदि मैं आपको इस बारे में संतुष्ट कर सकं कि यह विधेयक की हुई सेवाओं के लिए फीसों का उपबन्ध कर रहा है तो यह औचित्य प्रश्न का पर्याप्त उत्तर होगा ।

प्रथम, मुझे यह साबित करना है कि ये फीसें हैं । सारिणी में इन्हें फीस बतलाया गया है । इसके अतिरिक्त बचत खंड की अपेक्षा के अनुसार वे वस्तुरूप में फीसें हैं तथा की हुई सेवाओं के लिये फीसें हैं ।

कर से भिन्न फीस क्या है, यह प्रश्न उच्चतम न्यायालयों के सम्मुख हाल में दो न्यायनिर्णयों के लिए प्रस्तुत हुआ था, एक १६ मार्च को और दूसरा १८ मार्च को । वकील द्वारा अनेक तर्क पेश किए गए जिनमें यह दिखाने की कोशिश की गयी थी कि वस्तुतः फीस और कर में कोई अंतर नहीं रह जाता । किन्तु न्यायाधिपति मुकर्जी ने यह नहीं माना और कहा कि वास्तव में हमारे संविधान ने फीस और कर के मध्य अंतर माना है । यदि आप सारिणी की ओर देखें तो मालूम होगा कि फीसें ऐसी समवायों के पंजीयन के लिए हैं जिनकी एक निर्दिष्ट शेयर पूंजी है । उच्चतम न्यायालय के निर्णय में भी कहा गया है कि शब्द 'फीस' में सेवा का अर्थ सम्मिलित है । इस के निर्णय के अनुसार फीसें ऐसी आरोपण हैं जो की हुई सेवाओं के लिये लगाई जाती हैं । किन्तु इसके अतिरिक्त पंजीयन भी उन विशिष्ट सेवाओं में आ जाता है जिनकी कि अपेक्षा की गयी है ।

श्री एस० एस० मोरे : यदि सरकार द्वारा की गई सेवाओं के लिये रजिस्ट्रेशन फीस ली जाती है तो क्या अंश पूंजी की राशि के अनुसार सेवा की मात्रा में परिवर्तन होगा ?

श्री बिस्वास : बात यह है कि फीस की राशि के अनुपात में सेवाएं देना संभव नहीं होता । न्यायाधीशों ने भी कहा है कि फीस में तत् प्रति तत् होता है पर कर में नहीं । प्रत्येक मामले में यह सिद्ध करना संभव न हो कि सरकार द्वारा इकट्ठी की गई फीस की राशि और किसी विशेष सेवा में खर्च की गई राशि बराबर होंगी ।

श्री रघुरामैया (तेनालि) : जहां पर संभव न हो वहां पर दोनों राशियों में अंतर होगा ही । परन्तु जहां एक सी सेवाओं के लिये भिन्न भिन्न फीस ली जाती हो उस के लिये आप क्या कहेंगे ? असीमित समवाय के रजिस्ट्रेशन की फीस ४०० रुपये है परन्तु जिस समवाय में २० से अधिक सदस्य नहीं होते उस की रजिस्ट्रेशन फीस केवल ४० रुपये है । सेवाएं दोनों को समान प्राप्त होती हैं । क्या ४० रुपये अधिक राशि को आप कर नहीं कहेंगे ? क्योंकि वह राशि सरकार की सामान्य आय में चली जाती है ।

श्री एस० एस० मोरे : उत्तर देतें समय मंत्री जी अनुच्छेद ३६६ में दी गई व्याख्या को भी ध्यान में रखें । कहा गया है ।

"कराधान" के अन्तर्गत है किसी कर या लाभकर का लगाना चाहे फिर वह साधारण या स्थानीय या विशेष हो, और "कर" का तदनुसार अर्थ किया जायगा ।

फीस नाम भले ही हो परन्तु वह लाभकर हो सकता है यदि उस की राशि का की गई सेवाओं से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है । अतएव यह अनुच्छेद ११० और ११७ में दिये गये निर्बन्धनों में आ जायेगा ।

श्री बिस्वास : मैं पहले रघुरामैया द्वारा उठाई गई बात का जवाब दूंगा । उन का यह सोचना गल्ती है कि फीस तभी मानी जा सकती है जब सब से समान राशि ली जाय ।

श्री एस० एस० मोरे : परन्तु सेवा भी समान हो । हो सकता है इस का सम्बन्ध औचित्य प्रश्न से हो । हो सकता है यह कहना ठीक न हो कि एक मामले में वह ४० रुपये दे और दूसरे में ६० रुपये, विशेषतः जब कि कार्य दोनों में एक सा ही हो, क्योंकि अधिकारी एक कम्पनी को पंजीबद्ध करने में जो कार्य करेगा वही दूसरी के सम्बन्ध में भी ।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : सूचना के हेतु । क्या माननीय विधि मंत्री का यह कहना है . . .

श्री बिस्वास : आप ने अभी मेरी बात सुनी ही कहां है ।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : . . . . कि पंजीयन स्वयं में एक सेवा करना है ?

श्री एस० वी० रामस्वामी : जी हां, है ।

सभापति महोदय : क्योंकि विधि मंत्री सोमवार को उपलब्ध न होंगे इसलिये उन्हें जो कुछ कहना है कह लेने दीजिये । अन्त में उन से प्रश्न पूछा जा सकता है ।

श्री बिस्वास : बात यह है । मैं और मेरे कुछ मित्र एक कम्पनी खोलना चाहते हैं । हम एक प्रकार का लाभ उठाना चाहते हैं । कम्पनी खोलने के लिये हमें आवश्यक मंजूरी की आवश्यकता होती है, हमें कुछ उपचारिक बातें करनी पड़ती हैं, हमें कम्पनी को पंजीबद्ध करना होता है । जब तक ऐसा नहीं हो जाता तब तक हमें कम्पनी खोलने का अधिकार प्राप्त नहीं होता । इस कार्य के लिये मुझे फीस देनी होती है । अर्थात्, उस लाभ को प्राप्त करने के लिये, पंजीयक जहां तक मुझे एक महत्वपूर्ण सहायता देता है, मैं, निस्सन्देह . .

श्री एस० एस० मोरे : क्या फिर यह लाइसैन्स है ? तब क्या यह लाइसैन्स की फीस है ?

श्री बिस्वास : वास्तव में, आप स्वयं संविधान में देखेंगे कि लाइसन्स के लिये फीस

का निर्देश किया गया है और सामान्य शब्दों में "की हुई सेवाओं के लिये समस्त फीसें।" लाइसैन्स इसलिये हैं क्योंकि उन्हें साधारण तरीके से दिया जाता है, लेकिन जिस से कोई शक्य मामला न रह जाये—अभूतपूर्व—इसलिये उस में "की हुई सेवाओं" शब्दों का प्रयोग किया गया है। लाइसैन्स देना भी "की हुई सेवाओं" शब्दों में आ जाता है। वास्तव में यह बहुत महत्वपूर्ण सेवा है। मैं कोई कम्पनी तब तक नहीं खोल सकता हूं जब तक कम्पनी पंजीबद्ध नहीं हो जाती है, इसीलिये जब मैं कम्पनी के पंजीयन के लिये प्रार्थना करता हूं तो मुझ पर और मेरे मित्रों पर एक महत्वपूर्ण सेवा की जाती है। मेरा निवेदन है कि इस सम्बन्ध में कोई सन्देह हो ही नहीं सकता कि यह बहुत ही मूल्यवान, बहुत ही महत्वपूर्ण सेवा है जिस के लिये फीस दी जाती है।

दरों की विभिन्नता के सम्बन्ध में मुझे यह कहना है। ये समस्त फीसें, चाहे वे किसी दर पर क्यों न ली जाती हों, एक सामान्य निधि में जमा होती हैं और उस निधि को पंजीयन विभाग का व्यय पूरा करने के लिये रखा जाता है।

श्री एस० एस० मोरे : ऐसा प्रावधान कहां है ?

श्री बिस्वास : यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मामले में जो राशि ली जाती है वह वास्तव में उतनी ही हो जितनी कि उस विशेष मामले पर खर्च होती है। आप मामले पर इस दृष्टिकोण से विचार न कीजिये। हमें उन व्यक्तियों के लिये पंजीयन विभाग बनाये रखना है जो इस प्रकार की सेवा चाहते हैं। हो सकता है इस कार्य के लिये हमें अनेक कार्यालयों को बनाये रखना पड़े। आप विभिन्न दरों पर फीस लेते हैं। इन फीसों को इकट्ठा किया जाता है और बाद में उन्हें विभिन्न कार्यालयों, स्थापनाओं आदि में वितरित कर दिया जाता है। अतएव विभिन्न दरों पर फीस लेना औचित्यपूर्ण है। यदि आप प्रत्येक मामले में ५०० रुपये लें तो आप उन कम्पनियों के साथ अन्याय करेंगे जिन की पूंजी बहुत थोड़ी होती है। इसी उद्देश्य से सरकार ने फीसों की दरों में अन्तर रखा है जोकि ली जाती हैं। सम्बन्धित कम्पनियों की अंश पूंजी के विभिन्न मूल्यों के कारण ही दरों में अन्तर है। लेकिन, जैसा कि मैं कह चुका हूं, यह बात हमारे वर्तमान कार्य के लिये संगत नहीं है। हो सकता है यह औचित्य प्रश्न हो। हो सकता है कि ऐसा संशोधन हो कि दरों को पुनरीक्षित किया जाये, समस्त कम्पनियों के लिये एक सी दर हो। प्रश्न इस बात का है कि क्या इस प्रकार लागू करने ही से फीस की परिभाषा पूरी हो जाती है या इसे कर समझा जाये। कर भी भिन्न भिन्न राशियों के लिये होते हैं। यदि आप के पास १०० एकड़ भूमि है तो आप एक निश्चित राशि भू-राजस्व के रूप में देते हैं और वह भी एक निश्चित दर से। यदि क्षेत्र बड़ा या छोटा हुआ तो दर में अन्तर हो सकता है। हो सकता है मद्रास में जो दर हो वह बम्बई में न हो। या और किसी राज्य में न हो। अन्तर तो रहेगा ही, लेकिन इस से आधार भूत प्रश्न पर प्रभाव नहीं पड़ता; अर्थात्, आरोपण किस प्रकार का है ? वह कर है या फीस ? इसलिये विभिन्न दरों से कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। अतएव, मेरा निवेदन है कि की हुई सेवाओं के लिये भुगतान करने के पीछे जो उद्देश्य हैं उस में "फीस" शब्द आ जाता है। यहां यह प्रश्न नहीं उठाया जा सकता कि विशिष्ट सेवा की जा रही है और इस के लिये फीस ली जा रही है। अतः फीस, की हुई सेवाओं के लिये है, और यदि यही बात है तो यह परित्रण खंड में आ जाती है और इस का उठाये गये औचित्य प्रश्न से कोई सम्बन्ध नहीं रहता।

श्री रघुरामैय्या : माननीय विधि मंत्री न बताया कि दरें विभिन्न होती हैं लेकिन सब राशि एक ही निधि में जाती हैं जिस से विभिन्न कार्यालय बनाये रखे जा सकें । क्या अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान ......

श्री बिस्वास : मैं ने यह नहीं कहा कि चली गई । दलील के तौर पर मैं कहना चाहता हूं कि हो सकता है यह एक निधि में जमा हो और वितरित की जाये । मैं नहीं जानता कि प्रक्रिया क्या है । मैं पंजीयन विभाग का प्रभारी नहीं हूं और ना ही यह जानता हूं कि वास्तव में क्या होता है लेकिन दलील के रूप में मैं यह कहना चाहता हूं कि क्योंकि फीसों के दरों में अन्तर है इसलिये इस का यह अर्थ नहीं होता कि उन्हें संक्षिप्त रूप में फीस नहीं समझा जा सकता । हो सकता है इन में से प्रत्येक मामले में करारोपण एक सा न हो । मैं यही बताने जा रहा था । आप कल्पना कर सकते हैं कि इस प्रकार ली जाने वाली फीसें एक सामान्य निधि में जाती हैं और वहीं से वितरण होता है । मैं उस तरह से अपनी दलील समझा रहा था लेकिन मैं दावे के साथ यह नहीं कहता कि इन को जमा कर के एक ही निधि में रखा जाता है और बाद में वितरण होता है ।

श्री एस० एस० मोरे : क्या वित्त मंत्री यह बताने की कृपा करेंगे कि इस प्रकार की फीसों से जो राशि जमा होगी वह संचित निधि का भाग होगा या उसे किसी विशेष कार्य के लिये अलग रखा जायेगा ?

श्री सी० डी० देशमुख : जी नहीं । वह संचित निधि का भाग होगी ।

श्री बिस्वास : वह संचित निधि में जायेगी । और कोई दूसरा लेखा ही नहीं है जिस में राशि को डाला जा सकता है । ये आरोपण सामान्य आरोपण हैं । इस में कोई सन्देह नहीं है, यह "राजस्व" नहीं है । यह सामान्य राजस्व में नहीं मिलती । यह संचित निधि का भाग हो सकती है । लेकिन इस का यह अर्थ तो नहीं कि यह सामान्य राजस्व में मिल जाती है केवल इसलिये कि यह संचित निधि में रखी जाती है । विनियोग विधेयक के प्रावधानों के अन्तर्गत इसे भी संचित निधि में से निकाला जा सकता है । इस से कोई अन्तर नहीं पड़ता । किन्तु यह बात नहीं उठाई गई है । औचित्य प्रश्न अनुच्छेद ११७ के खण्ड (३) के अन्तर्गत नहीं उठाया गया है । वह बात अलग होती । मैं केवल उस बात का जवाब दे रहा हूं जो अनुच्छेद ११७(१) के अन्तर्गत उठाई गई है ।

श्री एस० एस० मोरे : क्या संचित निधि और सामान्य राजस्व दो अलग अलग निधियां हैं ?

श्री बिस्वास : उच्चतम् न्यायालय ने यह कसौटी रखी है—किसी विशिष्ट कार्य के लिये आरोपण किया गया है या नहीं । यह मामला कसौटी पर खरा उतरता है । यह एक विशिष्ट कार्य के लिये है तथा यह राशि विशिष्ट पक्षों से ली जा रही है चाहे वह एक व्यक्ति हो या अनेक । यह कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो सब पर लागू होती हो केवल इसलिये कि वे सरकार के अन्तर्गत नागरिक हैं । यही विशेषता है । उच्चतम् न्यायालय के निर्णय के अनुसार कर और फीस में यही अन्तर है ।

श्री रघुरामैय्या : जब आप विभिन्न कम्पनियों से फीस लेते हैं तो मानी हुई बात है कि आप उन्हें किसी अलग निधि में नहीं डालते यह राशि राजस्व में चली जाती है, चाहे आप इसे किसी भी नाम से पुकारें, और फिर इस में से अधिकृत विनियोग किये जाते हैं । यदि यह बात है तो फिर इस बात का सवाल ही नहीं रह जाता है कि विभिन्न कम्पनियों से ली गई राशि इन कम्पनियों की सेवा करने में लगाई जाती है । सामान्य विनियोग के

अन्तर्गत इसे किसी भी दूसरी चीज़
प्रयोग में लाया जा सकता है। माननीय मंत्री कृपा कर के इस को स्पष्ट करने का कष्ट करें।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : यदि माननीय सदस्य अनुदानों की मांगें देखें तो उन्हें मालूम होगा कि समस्त मांगों के सामने एक स्तम्भ में यह लिखा हुआ है कि सेवाओं के लिये फीस के रूप में कितना राजस्व प्राप्त हुआ है। उस में विशेष मांग पर व्यय दिखाया गया है। मांग कम कर दी जाती है या नहीं यह तो बजट का एक तरीका होता है, लेकिन उस विशेष विनियोग के साम ने यह दिखलाया गया है कि वह राशि फीस के रूप में प्राप्त हुई है। उस विशेष विभाग के लिये जो कुल राशि नियत की जाती है उस में से उसे घटा दिया जाता है। यह तो बजट का एक तरीका है जिस से मेरे माननीय मित्र अच्छी तरह परिचित होंगे।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : माननीय विधि मंत्री ने उठाई गई बात को स्पष्ट करने का प्रयत्न तो किया लेकिन हम अनुभव करते हैं कि उन्होंने हमें समझाने का कोई प्रयास नहीं किया। इस सम्बन्ध में वह स्वयं स्पष्ट नहीं प्रतीत होते।

सभापति महोदय : विधि मंत्री को क्या कहना है ?

श्री बिस्वास : मेरे विचार में मैं ने वह सब कह दिया है जो कुछ मुझे कहना चाहिये था। यदि अब मेरे माननीय मित्र प्रश्न पूछें तो, निस्सन्देह, मैं उन का उत्तर देने के लिये तैयार हूं।

सभापति महोदय : क्या विधि मंत्री को जो कुछ कहना था वह कह चुके ?

श्री बिस्वास : मुझे और कुछ नहीं कहना है। मैं अपनी बात कह चुका।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : माननीय विधि मंत्री.........

श्री रामास्वामी : मैं दो तीन बातें और कहना चाहता था।

सभापति महोदय : पहले श्री त्रिवेदी जी को अपना भाषण समाप्त कर लेने दीजिये।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : मुझे यह जान पड़ा कि विधि मंत्री यह स्वीकार करना चाहते हैं कि यह कर है फीस नहीं। फीस में तत् प्रति तत् होता है, कर में नहीं। जो समवाय रजिस्टर्ड होते हैं उन्हें रजिस्टर्ड होने से कोई सीधा लाभ प्राप्त नहीं होता अतएव दी गई राशि कर है फीस नहीं। इस विधेयक के खंड ५७१ में भी दिया गया है कि रजिस्ट्रार को दी गई फीस आदि की राशि संचित निधि में जमा कर दी जायगी।

श्री बिस्वास : मैं भी यह कह चुका हूं। इस से तर्क में कोई भेद नहीं पड़ता।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : प्रश्न तो यह है कि यह धन विधेयक है अथवा नहीं। यदि है तो राष्ट्रपति की स्वीकृति की आवश्यकता है। विधि मंत्री को अपनी गल्ती मान लेनी चाहिये थी।

श्री बिस्वास : यह धन विधेयक नहीं है। आप के सिवा और कोई ऐसा न कहेगा।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : अनुच्छेद ११७(३) में यह दिया गया है। परन्तु आपत्ति उस पर आधारित नहीं है अतएव यह कहा जा रहा है। जहां तक धन विधेयक का यह सम्बन्ध है विधि मंत्री को ऐसा नहीं करना चाहिये।

श्री बिस्वास : मैंने केवल तथ्य बताने के लिये कहा था कि औचित्य प्रश्न अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत नहीं उठाया गया है। पर यह कहने के पूर्व भी मैं स्वीकार कर चुका हूं कि संचित निधि में पैसा जमा किया

[श्री बिस्वास]

जायगा तथा वहां से लिया जायगा । पर इस से उठाये गये प्रश्न के उत्तर में दिये गये तर्क पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : मेरा निवेदन यह है कि संचित निधि में जमा किये जाने वाले पैसे से धन विधेयक का सम्बन्ध जोड़ना भ्रमात्मक है । भारत सरकार द्वारा जमा किया गया सब पैसा संचित निधि में ही जाता है । फीस, किसी विशेष शीर्ष में लगाई गई हो परन्तु वह जाती तो संचित निधि ही में है । उदाहरणार्थ खादी और हथकरघा निधि ही लीजिये । बेचे गये कपड़े पर प्रति गज तीन पाई की दर से इकट्ठी की गई राशि भी संचित निधि में जाती है और फिर वहां से वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय को मिलती है । यद्यपि वह राशि महालेखापाल सीधे हथकरघा बोर्ड और राज्यों को खर्च करने देता है फिर भी उस राशि का प्रबन्ध वाणिज्य तथा उद्योग मंत्रालय करता है । इसलिये यद्यपि यह फीस भी हो तो भी वह संचित निधि में जायगी । वहां जाने से इस के गुण प्रकार में कोई भेद नहीं पड़ता ।

श्री सी० डी० देशमुख: मैं चित्तूर के माननीय सदस्य से एक प्रश्न पूछूंगा । उनका कहना क्या यह है कि आपत्ति इस कारण है कि यह धन विधेयक है ।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : जी ।

श्री सी० डी० देशमुख: दूसरा प्रश्न यह है—क्या उन का तर्क इस बात पर आधारित है कि फीस से प्राप्त आय कैसे खर्च की जायगी । अभी आय प्राप्त नहीं हुई है, विधेयक के पारित होने पर ही आय प्राप्त होगी । क्या उनका कहना यह है कि संविधान में ऐसा उपबन्ध नहीं है कि फीस से प्राप्त आय संचित निधि में जमा की जा सके, और यदि कोई राशि संचित निधि में जमा होती है तो वह फीस नहीं हो सकती ।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : मैं यह नहीं कह रहा हूं । मैं केवल माननीय विधि मंत्री के तर्क का उत्तर दे रहा था ।

मुझे पता नहीं कि माननीय वाणिज्य मंत्री का यह कथन कहां तक सही है कि सरकार द्वारा वसूल किया जाने वाला सारा पैसा संचित निधि में जमा होता है । मुझे नहीं मालूम कि नमक, काफी अथवा चाय पर लगने वाला उपकर संचित निधि में जमा होता है या नहीं ।

श्री टी० टी० कृष्णमाचारी : सब राशियां संचित निधि में जमा होती हैं ।

श्री यू० एम० त्रिवेदी : अभी अभी उच्चतम न्यायालय ने इस विषय में एक कसौटी बतायी थी । या कि कोई फ़ी वसूल करके वह राशि अलग रखी जाती है और उस में से जिन सेवाओं के लिये वह फ़ी वसूल की गई हो उन्हीं पर व्यय किया जाता है तो फिर वह राशि भारत की संचित निधि में जमा नहीं होती और इसलिए उसे राजस्व अथवा कर नहीं कहा जा सकता; वह केवल फ़ीस है । किन्तु इस विशिष्ट मामले में मेरा निवेदन है कि पंजीयन के लिये जो फीस रखी गई है उस का नाम फीस होते हुए भी वास्तव में वह कर ही है । फीस देने से पंजीयन होता है किन्तु पंजीयन कोई सेवा नहीं है । अर्थात् इस में कोई तत् प्रति तत् नहीं है ।

मैं फिर एक बार दुहराता हूं कि संविधान के अनुच्छेद ११७(३) के अन्तर्गत यह एक धन विधेयक है और राष्ट्रपति की अनुमति बिना इस पर विचार नहीं किया जा सकता ।

१ बजे म० प०

श्री एस० वी० रामस्वामी : कर तथा फीस के बीच का भेद स्पष्ट करने के लिए उच्चतम् न्यायालय के न्यायाधीशों ने माननीय

विधि मंत्री द्वारा उल्लिखित निर्णय में कतिपय दृष्टान्त दिये हैं । किसी लेख के पंजीयन के लिए वसूल किये जाने वाले धन को फीस कहते हैं क्योंकि उस से पंजीयन कराने वाले व्यक्ति को वैध प्रतिष्ठा प्राप्त होती है । अतः धन की वसूली के उद्देश्य की ओर हमें देखना चाहिये । उद्देश्य स्पष्ट हो, तो उसे कर नहीं अपितु फीस कहा जायेगा । तालिका 'ख' में पंजीयन के लिए देने की फीस की दरें बतायी गई हैं । यदि आप अपने कारोबार को वैध समवाय की प्रतिष्ठा देना चाहें तो आप को ये फीस देनी होगी । इस में अनिवार्यता का अंश नहीं है । इसलिये इसे कर नहीं कहा जा सकता ।

दूसरी बात मैं संविधान के अनुच्छेद ११०(१) के बारे में कहना चाहता हूं । "किसी विधेयक को धन विधेयक तभी कहा जायेगा जब उस में केवल निम्न उपबन्ध हो......" इस में शब्द 'केवल' महत्वपूर्ण है । विधेयक में उन उपबन्धों के अलावा अन्य कोई चीज नहीं होनी चाहिये । प्रस्तुत विधेयक के खण्ड ५७१ में ही धन की बातें हैं और अन्य सारे ६११ खण्ड दूसरी बातों से सम्बद्ध हैं । अतः इसे धन विधेयक नहीं कहा जा सकता ।

तीसरी बात यह है कि यह विधेयक पुरानी विधियों का एकत्रीकरण करके उन में सुधार करने जा रहा है । इस की तालिका 'ख' तो १९१३ के अधिनियम से ज्यों की त्यों उठाई गयी है । अतः इसे कोई नया कर नहीं कहा जा सकता ।

श्री रघुरामैया : मेरे मित्र कहते हैं कि यह नया कर नहीं है । किन्तु वे भूल रहे हैं कि पहले पुराने अधिनियम का निरसन किया जा रहा है । अर्थात् अब यह अधिनियम बिल्कुल नया होगा ।

मैं मेरे माननीय मित्र से संविधान का अनुच्छेद ११७ पढ़ने की प्रार्थना करूंगा । उस में 'केवल' शब्द नहीं है । किसी विधान में अनुच्छेद ११०(१) में दिये गये उपबन्धों में से कोई एक भी उपबन्ध होने पर वह धन विधेयक बन जाता है और उस के लिए राष्ट्रपति की अनुमति आवश्यक हो जाती है ।

श्री रामस्वामी ने और यह भी कहा है कि कर में अनिवार्यता होती है किन्तु जब आप अनुज्ञप्ति या पंजीयन के लिए प्रार्थना करते हैं और तब आप से फीस मांगी जाती है तो उसे कर नहीं कहा जा सकता । किन्तु न्यायालयों में तो यह मानी हुई बात है कि जब सेवा के अनुपात में धन लिया जाता है तब ही उसे फीस कहा जायेगा । जिन समवायों के भागीदारों की संख्या २० तक सीमित होती है उन से आप ४० रुपये लेते हैं और जिन समवायों के भागीदारों की संख्या असीमित होती है उन से आप ४०० रुपये लेते हैं । इन दोनों मामलों म आप को कम अधिक सेवा क्या करनी पड़ती है ? वास्तविक स्थिति यह है कि यह सारा धन साधारण राजस्व में जमा किया जाता है और फिर उस का व्यय खादी विकास पर भी किया जा सकता है । यदि आप पंजीयन की सारी फीस समान कर दें तो शायद इन्हें कर न कह कर फीस कहा जा सकेगा ।

सभापति महोदया : इस औचित्य प्रश्न पर पर्याप्त चर्चा हो चुकी है । कुछ माननीय सदस्यों ने भय प्रकट किया है कि माननीय अध्यक्ष महोदय सभा में न होने के कारण यह सारी चर्चा निष्फल रहेगी । इस में तो कोई सन्देह नहीं कि मैं एक साधारण व्यक्ति हूं और मैं यह दावा भी नहीं करती कि मैं इस औचित्य-प्रश्न पर निर्णय दे सकती हूं । अतः मैं यह मामला माननीय अध्यक्ष महोदय पर छोड़ देती हूं जो आज के वाद-विवाद का वृत्तान्त पढ़ने के बाद अपना निर्णय दे सकेंगे ।

इसके पश्चात् सभा सोमवार, ३ मई, १९५४ के सवा आठ बजे तक के लिये स्थगित हुई ।

GIPD—HS—158 PSD—3-11-54—000